यु.जी.सी. द्वारा अनूदानित

लघुशोध परियोजना

''राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में बदलते मानव मूल्य''

शोधकर्ता

डॉ. प्रेमचंद कोराली

हिन्दी विभाग,

आणंद आर्ट्स कॉलेज, आणंद

अनुक्रमणिका

		पृष्ठ संख्या
१.	राजेन्द्र यादव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	१–१५
२.	मानव मूल्य से सम्बन्धित अन्य साहित्य	१६–२६
३.	राजेन्द्र यादव की कहानियों का विश्लेषण	२७–४६
४.	राजेन्द्र यादव के उपन्यासों का विश्लेषण	४७–६४
५.	राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में बदलते मानव मूल्य	६५–८५
	उपसंहार	८६–९१

१. राजेन्द्र यादव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

राजेन्द्र यादव के बाल्यकाल के संबंध में बहुत अधिक जानकारी साहित्य जगत में नहीं मिलती । यादव जी ने खुद अपने विषय में संक्षिप्त में लिखा है । समाज के प्रत्येक मनुष्य का जीवन कही न कही साहित्य से जुड़ा हुआ होता है । प्रत्येक साहित्यकार खुद से लेकर जीवन के प्रत्येक पहलू यथा संघर्ष, परिस्थितियों को सच्चाई के साथ न्याय देने की हर सम्भव कोशिश करता है ।

आगरा कमिश्नरी में श्री गोकुलसिंह यादव बड़े बाबू के पद पर कार्य करते थे, उनके छह पुत्र थे । उनके चतुर्थ बेटे का नाम मिस्त्रीलाल था, जिन्होंने इंटर पास करके लायसंस आफ मेडिकल प्रेक्टिस का डिप्लोमा किया और जीवन-यापन के लिए डाक्टरी शुरू कर दी । मिस्त्रीलाल के दो विवाह हुए । पहली पत्नी के देहान्त के दो वर्ष बाद ताराबाई से विवाह कर लिया । राजेन्द्र यादव इसी दम्पति की सन्तान है । यह वह समय था जब हमारे देश में अंग्रेजों का शासन था ।

राजेन्द्र यादव की माँ ताराबाई मराठी परिवार से थी, उन्हें हिंदी नहीं आती थी । वे पढने की बहुत शौकीन थी । उन्हें हिंदी सिखाने के लिए शिक्षक रखा गया । ताराबाई के पिता श्री रामसिंह जाधव महाराष्ट्र के अमरावती नामक शहर के निवासी थी, वे मराठी भाषी थे तथा समाज सुधार के कार्यों में उनकी रुचि अधिक थी । उनके जीवन-यापन का प्रमुख माध्यम खेती था । कुछ समय पश्चात वे अमरावती छोड़कर मध्यप्रदेश के अशोकनगर नामक शहर में आकर बस गए । यहाँ पर उन्होंने एक पुस्तकों की दुकान खोल ली और यहीं स्थायी हो गए ।

ताराबाई और मिस्त्रीलाल यादव के दस बच्चों में राजेन्द्र यादव सबसे बड़े थे । स्वाभाविक है, पहली संतान होने के कारण उन्हें अपने माँ-बाप का भरपूर लाड़, प्यार मिला । उनके माता-पिता हमेशा ही उन्हें राजेन्द्र सिंह नाम से ही पुकारते थे । बाद में राजेन्द्र

यादव ने अपने नाम के आगे लगा हुआ 'सिंह' निकाल दिया, जिससे साहित्य जगत उन्हें राजेन्द्र यादव के नाम से ही जानता है । उनके तीन भाई और छह बहने थी, जिनमें से एक बहन की मृत्यु हो गई । राजेन्द्र यादव की दो बहने जयपुर में, दो दिल्ली में तथा एक अमेरिका में है । राजेन्द्र यादव जी का परिवार शिक्षित परिवार है । उनका एक भाई इंजीनियर दूसरा भाई बीएस.सी. तथा तीसरा भाई बी.ए. हो चुके थे । उनके पितामह का नाम गोकुलसिंह था । वे भी बी.ए. पास थे ।

राजेन्द्र यादव जी के चाचा मवाना तहसील में सरकारी नौकरी करते थे, उनको परिवार में सबसे अधिक योग्य समझा जाता था । राजेन्द्र यादव को शिक्षा के लिए अपने इन्ही चाचा के पास मवाना भेजा गया । मवाना तहसील मेरठ जिले के अन्तर्गत आती है । राजेन्द्र यादव जी के अनुसार- ''मेरी उम्र लगभग दस-ग्यारह साल की थी कि अपने चाचा के साथ मेरठ जिले के मवाना मुझे पढ़ाई के लिए भेजा गया । क्योंकि परिवार में चाचा अधिक बुद्धिमान समझे जाते थे और सबसे ज्यादा शिक्षित थे । वे मवाना तहसील में नौकरी करते थे । मैं इसी चाचा के साथ पढ़ाई के लिए रहा था । पढ़ाई के साथ खेलकूद में रुचि थी । इसी काल में हाकी मेरा प्रिय खेल बन गया था । एक दिन खेलते समय एक लड़के ने करवट ही बदल ली । पैर को भारी चोट लगी थी । परंतु घर में बताया नहीं कि लड़के ने मारा है । अगर घर में बताता तो डाँट-फटकार का डर था । अतः आरम्भ में मामूली इलाज किए, लेकिन पैर बहुत फूल गया । पिताजी झाँसी में नौकरी पर थे । जब एक महीने के बाद मालूम हुआ तो देखने आए और मथुरा के अच्छे सर्जन को दिखाकर इलाज कराया और मुझे अपने साथ ही झाँसी रख लिया ।''(१)

पिता मिस्त्रीलाल यादव अपना अधिक से अधिक समय बेटे के पास ही गुजारते । पैर की इस चोट के कारण राजेन्द्र जी को कई दिनों तक बिस्तर पर ही रहना पड़ा । इस दौरान उनके पिता बिस्तर के पास ही अपनी कुर्सी डाल कर कई-कई घंटों उनको किस्से और कहानियाँ सुनाया करते । प्रमुख रूप से 'अलिफ लैला', 'दास्तान-ए-अमीर हम्ज' सुनाया करते तथा

'चन्द्रकांता संतति' के किस्से स्वयं पढकर समझाते । दाहिने पैर में चोट के कारण उसमें विकलांगता आ गई । काफी दिनों के पश्चात उनका स्वास्थ्य सुधर गया, परंतु इस चोट ने उन्हें विकलांग बना दिया ।

स्वास्थ्य में शनैःशनैः सुधार आता गया । झाँसी में ही अपने पिता के साथ रहकर पढाई की तथा मैट्रिक की परीक्षा पूर्ण की । विकलांगता की वजह से अब उनका ध्यान खेल-कूद की जगह पढाई की ओर अधिक हो गया । दिनभर पढ़ना और खूब पढ़ना उनकी दिनचर्या बन गया ।

राजेन्द्र यादव की मैट्रिक तक की पढाई झाँसी में हुई । इसके बाद की पढाई आगरा में हुई उनके ही शब्दों में..... ''मेरी मैट्रिक तक की पढाई झाँसी में हुई । मैट्रिक हो जाने के बाद झाँसी छोड़कर मैं आगरा अपने पैतृक घर आया । आगे की पढाई आगरा में शुरु हुई ।''(२)

शारीरिक विकलांगता के बाद यादव जी की पढ़ाई की लगन दिन ब दिन बढ़ती चली गई । राजेन्द्र यादव जी के पिता को उर्दू में अधिक रुचि थी अतः उनको प्राथमिक शिक्षा उर्दू में ही दी गई । हिंदी बाद में सीखी । पढ़ने की लगन इतनी थी कि बहुत कम उम्र में ही विश्व के सर्वाधिक बड़े उपन्यास 'दासता-ए-हम्ज' को पढ़ लिया । आगरा में ही हिंदी विषय लेकर बी.ए. किया और सन १९५१ में हिन्दी विषय से एम.ए. की उपाधि प्रथम श्रेणी में हासिल की । एम.ए. होने के पश्चात अन्य कोई उपाधि के लिए वे पढ़ना नहीं चाहते थे परन्तु अन्य क्षेत्र में शिक्षा जारी रही । उनके लिए उस समय नौकरी भी उपलब्ध थी, परन्तु उनका मन नौकरी के लिए तैयार नहीं था । उनके अंदर का कलाकार नौकरी के चक्कर में पड़ना नहीं चाहता था। राजेन्द्र यादव अपनी संवेदनाओं को एक व्यापक रूप में देखना चाहते थे । जबकि उनके पिता की इच्छा थी कि राजेन्द्र शीघ्र ही कोई नौकरी कर ले । डॉ. अर्जुन के कथनानुसार- ''एक दृष्टि से अच्छा हुआ कि राजेन्द्र यादव नौकरी के झमेले में पड़े नहीं वरना हिंदी साहित्य जगत एक मूर्धन्य साहित्यकार से वंचित रह जाता ।''(३)

साहित्य जगत में राजेन्द्र जी का नाम प्रसिद्ध हो रहा था । आगरा कालेज के विद्वान अध्यापक पंडित जगन्नाथ तिवारी राजेन्द्र जी के गुरु थे । यादव जी उनके प्रिय शिष्य थे । गुरुदेव की भी अत्यंत इच्छा थी कि राजेन्द्र यादव अध्यापक की नौकरी कर ले, परन्तु उनका कहना भी उन्होंने बड़ी नम्रता के साथ मना कर दिया और आगरा कालेज में अध्यापक का पद स्वीकार नहीं किया । राजेन्द्र यादव जी ने स्वयं कहा है- ''शायद मैं उस दिन आगरा कालेज के स्टाफ में आने की बात मान लेता, अगर वह हो जाता, तो पता नहीं आज जिंदगी क्या होती ?''(४) राजेन्द्र का यह निर्णय उनके पिता को उचित नहीं लगा । उनके भविष्य के लिए उन्होंने राजेन्द्र यादव के दोस्त कमलेश से कहा कि आगरा कालेज बहुत प्रतिष्ठित हैं इसमें काम करते हुए तुम्हारे लेखन कार्य में कोई रुकावट नहीं आएगी । तिवारी जी की कई लोग खुशामद करते हैं कि वे कालेज में ले ले । अगर तिवारी जी कह रहे है तो उनकी बात तुम्हें मान लेनी चाहिए । सभी मित्र राजेन्द्र जी को समझा-समझा कर थक गए किन्तु वो किसी की भी बात को समझने के लिए तैयार नहीं थे ।

राजेन्द्र जी को एक शहर या नौकरी से बंधकर रहना बिल्कुल भी पसंद नहीं था उनका कहना था कि- ''स्वतंत्र रहना है और लिखना है, जगह जगह घूमना है, तरह-तरह के लोगों से मिलना । उन दिनों में कभी किसी अंजान स्टेशन पर रात बिताने के सपने देखता था, कभी किसी सुदूर गाँव में अपरिचितों के बीच, कभी बड़े शहर की भीड़ और होटल में खूब घूमूँगा, निरुदेश्य भटकूँगा, और डायरियाँ लिखूँगा, उपन्यास कहानियाँ लिखूँगा ।''(५)

लाड़ले बेटे होने के कारण पिताजी उनका पूरा ध्यान रखते थे । बड़े बेटे का विकलांग होना उनके दुःख का बहुत बड़ा कारण था । वे एक दिन अपने अस्पताल में काम कर रहे थे तभी उन्हें चक्कर आने लगे सारा काम छोड़कर वे कुर्सी पर बैठ गए । कमजोरी बढ़ने के कारण दिन-प्रतिदिन उनकी हालत बिगड़ती गई । कुछ दिन बाद दिल का दौरा पड़ने से सन् १९५३

में उनकी मृत्यु हो गई । इससे राजेन्द्र यादव को गहरा धक्का लगा । अत्यन्त दुःख में डूबकर वे विरक्ति और उदासीनता से भर गए ।

पिताजी बीड़ी के शौकीन थे । राजेन्द्र जी बीड़ी नहीं पीते थे किन्तु पाइप अवश्य पीते थे ।

यादव जी को संस्कार पिता की ओर से प्राप्त हुए । इस संबंध में उनका कथन है कि ''दोस्तों को शौक से और खुले दिल से खिलाना अच्छा लगता था, उनकी हर तरह की मदद और सहायता करने में एक आत्मिक सुख होता था ।''(६) खूब पढ़ना और लिखना ये उन्हें विरासत में मिला । उनके पिता को उड़द की दाल घी डालकर खाना और सूखे आलू की सब्जी बहुत पसंद थी । राजेन्द्र जी को भी यह सब्जी बहुत पसंद है । राजेन्द्र यादव अपने पिता के संस्कारों से अलग नहीं हो पाए ।

कुछ समय आगरा में रहने के पश्चात् वे आगरा को छोड़ कर कोलकत्ता में आ गये । उनके अंदर कुछ अलग हट कर करने की इच्छा थी इसी वजह से १९५४ में आगरा को त्यागकर कलकत्ता आ गए । यहाँ आकर वे शोधकार्य करना चाहते थे । शोधकार्य के लिए यह स्थान अनुकूल है । रिसर्च के साथ-साथ अपने खाने-पीने और रहने की व्यवस्था करनी थी । जिसके लिए उन्होंने भैरवमल सिंधी जी से बात की, जो उनके मित्र थे । उनकी मदद से ही सोलिसिटर के दो लड़को को हिंदी पढाने का काम भी मिला किन्तु उनको हिंदी पढ़ाना हो नहीं पाया क्योंकि वे बच्चों को पढ़ाने जाते बच्चे होमवर्क में ही व्यस्त रहते और वे रूपए लेकर लौट आते । तीन महीने बाद अपने मित्र से कहा कोई और काम बताए । इधर-उधर की बाते करके, बिना बच्चों को पढ़ाए पैसे लेना मुझे अच्छा नहीं लग रहा । उनकी आत्मा इसके लिए तैयार नहीं । कलकत्ता शहर में ही भारत की प्रसिद्ध लाइब्रेरी है जो नेशनल लाइब्रेरी के नाम से जानी जाती है । यादव जी प्रतिदिन यहाँ आया करते और हर समय पढ़ते रहते । वे आगरा छोड़कर यहाँ शोधकार्य करने के लिए ही यहाँ आए । सिंधी जी अक्सर उनको याद दिलाते रहते

कि तुम अपना शोधकार्य पूर्ण कर लो पर राजेन्द्र जी पढ़ते-पढ़ते खुद लिखने लगे और अपने शोधकार्य को भूल गए ।

इस महानगर में जिंदगी चलाने के लिए काम धंधा करना जरूरी था इसलिए 'ज्ञानोदय' पत्रिका में सहायक संपादक की जिम्मेदारी संभाल ली । परन्तु यहाँ उनका मन नहीं लगा और कुछ समय पश्चात त्यागपत्र दे दिया । फिर 'जियोलोजिकल सर्वे'में हिन्दी प्राध्यापक के रूप में काम किया । पाँच-छह माह पढ़ाने के पश्चात यहाँ से भी त्याग-पत्र देकर नौकरी से मुक्त हो गए । ये उनकी विशेषता थी कि जहाँ कही भी उन्हें अपनी इच्छा के विरुद्ध काम करना पड़े तो वहाँ काम करना पसंद नहीं करते थे । एक ही ढर्रे पर चलकर जीना उन्हें कभी पसंद नहीं आया । वो आकाश में 'मुक्त' होकर विचरण करना चाहते ।

पारिवारिक माहौल तथा वैवाहिक जीवनः

यादव जी के दादा श्री गोकुलसिंह यादव उस जमाने के बी.ए. थे । जिस परिवार में इनका जन्म हुआ, उसके सभी सदस्य शिक्षित थे । इनके पिता मिश्रीलाल जी डाक्टर थे । माता ताराबाई पढने की बहुत शौकीन थी । ज्यादातर मराठी किताबे पढ़ती थी । सभी बहने एम.ए. कर चुकी थी । तीनो भाई क्रमशः इंजीनियरींग, बीएस.सी. तथा बी.ए. तक पढे हैं ।

यादव जी की परवरिश एक सुशिक्षित परिवार में हुई । आर्थिक रूप से वे कभी परेशान नहीं रहे । उन्हें लोगों से मिलना जुलना बेहद पसंद था ।

हिंदी जगत की प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भंडारी के साथ राजेन्द्र यादव ने विवाह किया । राजेन्द्र यादव क्षत्रिय परिवार से और मन्नू भंडारी जैन परिवार से । मन्नू जी के घर वाले शादी के खिलाफ थे । उनके पिता को यह रिश्ता पसंद नहीं था । जैन संस्कारों में पली मन्नू भंडारी का विवाह राजेन्द्र यादव से करने के पक्ष में नहीं थे । परंतु दोनों ही एक दूसरे से शादी करना चाहते थे अतः २२ नवंबर १९५६ को कानूनन रजिस्टर मैरिज करके विवाह बन्धन में बंध गए ।

राजेन्द्र जी के परिवार को इस सम्बंध में कोई भी ऐतराज नहीं था । परन्तु उन्होंने परिवार के सभी सदस्यों को अपनी शादी में आने के लिए मना कर दिया । मन्नू जी के शब्दों में-''बस विवादी स्वर था तो केवल एक-इस शादी को रोक देने का आदेश देते आखिरी दिन तक आने वाले पिताजी के तार, जिसकी भनक तक जीजाजी ने उस समय मुझे नहीं लगने दी । गोविंद जी कानोडिया के लान में विवाह के रजिस्टर पर हम लोगों ने दस्तखत किए थे, मालाएँ बदली थी ।''(७)

साहित्यकार के रूप में यादव जी को यशपाल और रांगेय राघव अत्यधिक भाते है । मन्नू भंडारी की भावात्मक सहज शैली बेहद रूचिकर लगती है । रांगेय राघव की कहानियों में जो ऊर्जा दृष्टिगोचर होती है उसने इन्हें अत्यन्त प्रभावित किया है । यादव जी ने क्रांतिकारियों पर एक या दो कहानी लिखी है । आजादी के दौर में पाकिस्तान के विभाजन के समय में हुई साम्प्रदायिक हिंसा और देशों ने उन्हें बेहद प्रभावित किया था ।

लगभग आठ-दस साल तक कलकत्ता में निवास करने के पश्चात २ मई १९६४ को सदा के लिए कलकत्ता छोड़ दिया । इस महानगर को छोड़ने के पश्चात वे दिल्ली आ गए और फिर दिल्ली के ही होकर रह गए । इन्होंने बड़े शहरों में ही रहना पसंद किया । दिल्ली जैसे शहरों में तो रोज ही नए अनुभवों से रुबरु होना पड़ता है । एक समर्पित साहित्यकार सम्पूर्ण रूप से अपने को साहित्य के लिए ही समर्पित कर देता है ।

मन्नू जी के साथ हमेशा ही उनका दोस्ताना सम्बन्ध रहा । अपने पति होने का अधिकार जताना उन्हें कभी पसंद नहीं था । मन्नू जी को पूर्ण स्वतंत्रता थी । वे आपस में मित्र के रूप में रहना अधिक पसंद करते थे न कि पति-पत्नी के रूप में । वे नारी मुक्ति के अनुयायी थे । राजेन्द्र यादव जी कहते है कि- अभी तक तो हम लोग परम्परागत अर्थ में पति-पत्नी है ही नही । वह मेरे सामने पत्नी के रूप में न आकर मित्र के रूप में ही आती है-''ऐसे दो मित्र

जिनकी समानांतर चलती जिंदगी एक ही छत के नीचे गुजर रही है और किसी भी दिन ये छते दो हो सकती है ।''(८)

राजेन्द्र यादव और मन्नू भंडारी की एक ही संतान है, जिसका नाम उन्होंने रचना रखा, जिसको अधिकतर मन्नू भंडारी की बहन सुशीला ही संभालती थी लगभग तीन वर्ष तक मन्नू जी हर सुबह सुशीला के पास छोड़ जाती और शाम को लौटते समय वहाँ से ले आती । रचना के बारे में उनका कहना है- ''जिंदगी में एक बार मैंने रचना को रोते हुए देखकर एक चाँटा मारा था, परन्तु बाद में खुद रोया था, तब से बेटी को डाँटना भी मुझे कभी पसंद नहीं आया ।''(९) इसके बाद राजेन्द्र जी ने अपनी बेटी को कभी नहीं डाँटा । मन्नू जी शिकायत भी करती थी तो यादव जी को डाँटना गँवारा नहीं था । उन्होंने हमेशा अपनी बेटी की खुशी को अपनी खुशी समझा ।

बेटी का विवाह भी अन्तर्जातीय विवाह हुआ । रचना ने अपना जीवन साथी स्वयं पसंद किया । दोनों को ही इस विवाह से कोई ऐतराज नहीं था । दिनेश खन्ना नाम के युवक के साथ रचना ने अपना विवाह किया । दिनेश जी खत्री समाज से आते हैं । इस तरह रचना की शादी हो गयी । दिनेश खन्ना देश के सर्वश्रेष्ठ फोटोग्राफरों की गिनती में आते हैं । दिल्ली के नजदीक डी.एस.एफ. कोलोनी में रहते हैं । रचना के एक पुत्री भी है ।

दोनों साहित्यकारों की दुनियाँ साहित्यिक अभिरुचियों की ही थी । उन्हें दुनियादारी एवं भौतिक संपदाओं में अधिक रुचि नहीं थी । उनका कथन है कि ''असल में हम लोगों में से कोई भी गृहस्थी के लायक नहीं है । हमें तो किसी होटल में रहना चाहिए, जहाँ सभी कुछ मिल जाए और कुछ भी अपना नहीं ।''(१०)

यादव जी का महत्वपूर्ण अधिकांश समय महानगरों में ही बीता । बड़े शहरों में रहने वाले ज्यादातर लोग आत्मकेन्द्रित हो जाते हैं, मगर राजेन्द्र जी में स्वार्थ दूर-दूर तक नहीं दिखाई दिया ।

लगभग ३५ वर्ष तक साथ रहने के पश्चात मन्नू भंडारी और राजेन्द्र यादव अलग-अलग हो गए । अलग होने का निर्णय लेते समय पति-पत्नी के बीच काफी दूरियाँ और मनमुटाव आ जाता है, परन्तु दोनों आज भी अभिन्न मित्र है । वे अलग-अलग मकानों में रहकर भी एक-दूसरे के सुख-दुख में काम आते हैं । एक दूसरे की समस्याओं का समाधान भी करते हैं । लगभग तीन चार बरस पश्चात राजेन्द्र जी को मधुमेह तथा अन्य रोगों के कारण अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में दाखिल होना पड़ा, उस दौरान मन्नू भंडारी सुबह से लेकर काफी रात तक यादव जी के पास रही और तन-मन-धन से सहयोग किया । ये समय ८ सितम्बर से १० अक्तूबर का रहा ।

इस तरह देखा जाए तो अलगाव होने के पश्चात भी वे हमेशा एक दूसरे के हितेषी रहे । एक लेखक के रूप में जितनी ख्याति राजेन्द्र जी को मिली है वह सभी लोग जानते हैं । वर्तमान साहित्यकारों की तरह राजेन्द्र जी को अपनी रचनाओं पर चर्चा करना रुचिकर नहीं लगता था उनका सिर्फ लेखन में रूझान रहता था । इस बारे में मन्नू जी का कथन है- ''लेकिन जो कुछ लिखा जा चुका है, उसे लेकर बातें करते हुए मैंने इन्हें शायद ही कभी सुना हो । कभी कभी कोई विशेष रचना का हवाला देकर सवाल कर भी दे तो उत्तर कुछ ऐसे भाव और संक्षिप्त में देंगे, मानो उससे इन्हें विशेष लगाव है न उसमें विशेष रुचि । अक्सर ही साहित्यकार अपनी लिखी हुई चीजों को बड़ा रस लेकर परम तृप्ति और 'नारसीसस भाव' से उन्हें पूरा का पूरा दोहराते रहते हैं लेकिन इस विषय में इनकी निःस्पृहता सचमुच ही बेहद अविश्वसनीय है ।''(११) अपने और अपने लेखन के संबंध में उनका कथन है कि- ''वह मेरा नितांत व्यक्तिगत युद्ध क्षेत्र है और वहाँ मुझे अकेले ही लड़ना है । यहाँ मेरा साथ कोई भी शायद तुम जैसा सहृदय भी नहीं दे सकता । जब नियति वही है तो क्यों बार-बार अपना युद्ध क्षेत्र छोड़-छोड़ कर यह बताता रहूँ कि देखो, मैंने यह तीर मारा यह तलवार मारी ।''(१२) वैसे हमेशा उनका लक्ष्य सिर्फ लेखन रहा है बयानबाजी या सफाई देना उनके स्वभाव में नहीं । जब राजेन्द्र जी से मन्नू भंडारी

की शादी हुई थी तब कुछ दिनों के बाद वे सोचने लगी थी कि राजेन्द्र गृहस्थी में उतना रूझान नहीं रखते जितनी अपनी लेखन से रखते हैं । वे हमेशा यह कहती थी कि राजेन्द्र जिंदगी से भागते हैं । उनके पास एक सूची भी थी कि यदि राजेन्द्र में ये बाते न हो तो वे सबसे अच्छे है । ये भी स्वीकार करती है कि उन्होंने ऐसा सुख भी दिया है जिसकी कल्पना वे अन्य व्यक्ति के साथ नहीं कर सकती । ये उनका सौभाग्य रहा या दुर्भाग्य ये आज तक नहीं समझ पाई । समय ने यादव जी के जीवन में शोहरत, प्रेम और पैसा भी दिया तो कभी दुःख, तनाव और गम ।

मनुष्य का स्वभाव है कि वह समय-समय पर किसी न किसी का अनुकरण करता रहता है । समाज में रहते हुए अपने चारों ओर के परिवेश, स्थितियों और सामाजिक रूप तथा विद्रूपताओं को अपने लेखन के माध्यम से सामने लाता है, जो वो देखता है जो वो भोगता है वही उसके साहित्य में कहीं न कहीं दृष्टिगोचर होता है । हाँ उसमें उसकी सरलता, सुन्दरता और शैली अलग ही दिखाई देती है जो मन को झकझोर कर रख देती है ।

सन् १९५० में उनका पहला कहानी संग्रह छपा था, जिसका कवर रांगेय राघव ने बनाया था, संग्रह का नाम था 'रेखाएँ, लहरें और परछाइयाँ' ।

बचपन में यादव जी ने एक के बाद एक क्रमशः तीन उपन्यास लिखे, जबकि पिताजी अक्सर उन्हें कहानी लिखने के लिए कहते । उसके एवज में यादव जी कहते कि आप कितना भी कहिए मैं कहानियाँ नहीं लिखूँगा । जब मैं उपन्यास लिख सकता हूँ तो कहानियाँ क्यों लिखूँ ? उस समय कहानी उनकी दृष्टि में दोयम दर्जे की विधा थी । परन्तु आज उन्हें उपन्यास विधा के साथ-साथ कहानी विधा भी अत्यधिक प्रिय है ।

प्रयाग से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'कर्मयोगी' में सन् १९४७ में उनकी प्रथम

कहानी 'प्रतिहिंसा' प्रकाशित हुई । 'प्रेत बोलते हैं' उपन्यास 'सारा आकाश' के नाम से प्रकाशित हुआ । ये उपन्यास यादव जी ने एम.ए. की पढ़ाई के साथ-साथ लिखा । इसी उपन्यास पर सन् १९७२ में बासु चटर्जी ने फिल्म बनाई । विद्यार्थी काल से ही उनकी लेखनी में पैनापन आता गया । राजेन्द्र यादव ने कभी भी अपने जीवन में समझौता नहीं किया विशेष रूप से साहित्यिक क्षेत्र में । सामाजिक जीवन में तो कभी न कभी प्रत्येक व्यक्ति को समझौता करना पड़ता है । माँग के अनुरूप बाजारू उपन्यास या कहानी लिखना उन्हें कभी रास नहीं आया वो हमेशा इसके खिलाफ रहे । अनुभूतियों के आधार पर ही लेखक अपने साहित्य का सृजन करता है । ये अनुभूतियाँ मनुष्य के जीवन में अपने आस-पास अपने समाज से ही प्राप्त होती है बस उसके लिए आपके पास उस पारखी दृष्टि का होना अनिवार्य होता है । यादव जी के कथा साहित्य में यथार्थ जीवन के अनुभवों की झाँकी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है । साहित्य के प्रति उनकी प्रतिबद्धता दर्शनीय है ।

१९६५ में यादव जी ने 'अक्षर प्रकाशन' शुरू किया उन्हें इस बात का अनुभव था कि प्रकाशक किस तरह लेखकों का शोषण करते हैं। 'हंस' मासिक प्रेमचंद जी ने सन् १९३० को चलाया था, जो कुछ समय बाद बन्द हो गया । फिर यादव जी ने अगस्त १९८६ में 'हंस' का सम्पादन कार्य आरम्भ किया । उनके शब्दों के अनुसार- ''सन् १९३०-३६ के 'हंस' की प्रतिलिपियाँ हम पुनर्प्रस्तुत करने नहीं जा रहे हैं । वह 'हंस' अपने समय से जुड़ा था और यह 'हंस' अपने समय और मुहावरे से जुड़ सके, यही हमारा प्रयास है ।''(१३)

उनके अब तक के साहित्यिक जीवन के दौरान निम्न साहित्य प्रकाशित हुआ है ।

राजेन्द्र यादव का साहित्य सागर

१.	सारा आकाश (प्रेत बोलते हैं)	१९५१ तथा १९६०
२.	शह और मात	१९५६

३.	उखड़े हुए लोग	१९५६
४.	कुलटा	१९५७
५.	अनदेखे अनजाने पुल	१९६३
६.	एक इंच मुस्कान (मन्नू भंडारी के साथ)	१९६३
७.	मंत्रबिद्ध	१९६७

कहानी संग्रहः

१.	रेखाएँ, लहरें और परछाइयाँ	१९४६
२.	देवताओं की मूर्तियाँ	१९५२
३.	खेल खिलौने	१९५४
४.	अभिमन्यु की आत्महत्या	१९५६
५.	जहाँ लक्ष्मी कैद है	१९५७
६.	छोटे-छोटे ताजमहल	१९६१
७.	टूटना तथा अन्य कहानियाँ	१९६३
८.	किनारे से किनारे तक	१९६३
९.	अपने पार	१९६८
१०.	चौखटे तोड़ते त्रिकोण	१९६३
११.	प्रिय कहानियाँ	१९७१
१२.	ढ़ोल तथा अन्य कहानियाँ	१९७२
१३.	वहाँ तक पहुँचने की दौड़	१९६१
१४.	श्रेष्ठ कहानियाँ	१९८३
१५.	एक जगह सब अब तक की कहानियाँ	
	१. पड़ाव २. वहाँ तक	१९६०

१. पड़ाव २. वहाँ तक १९६०

१६. प्रतिनिधि कहानियाँ –

१७. मेरी कहानी मेरा चुनाव –

१८. दस प्रतिनिधि कहानियाँ –

१९. प्रेम कहानियाँ –

कविता संग्रहः

१. आवाज़ तेरी है १९६०

बाल साहित्यः

१. परी नहीं मरती १९७८

घरी की तलाश १९८०

व्यक्ति चित्रः

१. औरो के बहाने १९८०

२. वे देवता नहीं है २०००

३. मुड़-मुड़ के देखता हूँ २००१

अनुवादः

अ – उपन्यास	**मूल लेखक**
१. अजनबी	कामू
२. हमारे युग का एक नायक	लर्मेनतोब
३. एक मछुआ एक मोती	स्टाइनबैक
४. संत सर्गीयस	टालस्टाय
५. टक्कर	चैखव
६. बसंत प्लावन	तुर्गनेब

ख – नाटक

१.	हँसना	चैखब
२.	तीन बहने	चैखब
३.	चेरी का बगीचा	चैखब

ग. काँटे की बात के दस पड़ाव प्रकाशित है ।

संपादनः

१.	कथा दशक– हिन्दी कहानियाँ	१९६०
२.	कहानी सुर्खियाँ (अफ्रीकी)	१९६०
३.	आत्म तर्पण	१९६४
४.	मेरे साक्षात्कार	१९६५
५.	एक दुनियाँ समानांतर	१९६६
६.	कथा यात्रा	१९८१
७.	औरतः उत्तर कथा	२००१
८.	अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य (राजेन्द्र यादव, अर्चना वर्मा)	२००१
९.	नए साहित्यकार पुस्तक माला में– मेरे हमदम मेरे दोस्त श्रृंखला	
१०.	मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, फणीश्वर नाथ रेणु तथा मन्नू भंडारी की चुनी हुई कहानियाँ ।	

समीक्षा ग्रंथः

१.	कहानीः अनुभव और अभिव्यक्ति	१९६६
२.	कहानीः स्वरूप और संवेदना	१९६८
३.	उपन्यासः स्वरूप और संवेदना	१९७८
४.	प्रेमचंद की विरासत	१९७८

५.	अठारह उपन्यास	१९८१
६.	काँटे की बात (दस खण्ड में)	
	१ से ६ खण्ड	१९६८
	७ से १० खण्ड	२०००
७.	आदमी की निगाह में औरत	२००१

संदर्भः

१. डॉ. अर्जुन चौहान- राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में मध्यमवर्गीय जीवन पृ. १८

२. चंद्रभानु सोनवणे- कथाकार राजेन्द्र यादव, पृ. १४

३. राजेन्द्र यादव-औरो के बहाने, पृ. ८०

४. मोहन राकेश-मेरा हमदम मेरा दोस्त, पृ. २७

५. राजेन्द्र यादव-औरो के बहाने पृ. ११

६. वही पृ. १३६

७. राजेन्द्र यादव- मेरे साक्षात्कार, परिशिष्ट -१

८. राजेन्द्र यादव- औरो के बहाने, पृ. १३३

९. डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे- कथाकार राजेन्द्र यादव, पृ. १९

१०. डॉ. माधवी श्रीधर भंडारी-राजेन्द्र यादवः कथा-साहित्य के विविध आयाम,पृ. २७

११. राजेन्द्र यादव-औरो के बहाने, पृ. १४३

१२. राजेन्द्र यादव-मंत्रविद्ध और कुलटा, पृ. ८३

१३. संपादक राजेन्द्र यादव 'हंस' मासिक पृ. ६, अगस्त, १९८९, नई दिल्ली ।

२. मानव मूल्य से संबंधित अन्य साहित्य

हिन्दी साहित्याकाश में प्रेमचंद का नाम ध्रुव तारे की तरह अटल है । साहित्य जगत में प्रेमचंद को उपन्यासकार सम्राट के नाम से अलंकृत किया जाता है । प्रेमचंद से पूर्व कथा साहित्य में केवल मनोरंजन, ऐतिहासिक, तिलस्मी, प्रेम प्रधान तथा सामाजिक साहित्य लिखा जाता था, जिसका समाज से तथा सामान्य जन-जीवन से कोई सरोकार नहीं था ।

प्रेमचंद जी ने कहानी और उपन्यास को कल्पनाओं के आकाश से उतार कर जीवन के यथार्थ एवं कठोर धरातल पर स्थापित किया । 'सेवा सदन' उपन्यास, जो सन् १९१८ में प्रकाशित हुआ, उस उपन्यास से ही हिन्दी साहित्य संसार में इनका आगमन हुआ जो हिन्दी साहित्य जगत के लिए एक वरदान के रूप में सामने आया । उपदेश और तिलस्मी साहित्य की ओर से अलग हट कर जीवन के कटु सत्य का विस्तार से चित्रण करते हुए एक आन्दोलन शुरू किया । वे मूर्तिपूजा, व्रत-दान-दक्षिणा और समाज में फैले हुए अन्धविश्वास और ढ़कोसलों को काफी नजदीक से देख चुके थे । उन्होंने जीवन की वास्तविक सच्चाई को यथार्थ के धरातल पर उतारकर जीवन की अनेक समस्याओं का बड़ी ही सरलता के साथ चित्रण किया है । उस समय के वातावरण में चारों तरफ एक घुटन का कुहाँसा सा व्याप्त था, हर तरफ धार्मिक कर्मकाण्ड, पाखंड और अंधविश्वास का साम्राज्य था । इस माहौल को प्रेमचंद जी ने अपनी लेखनी से बड़े ही मार्मिक और सरल शब्दों से दूर करने की कोशिश की । उनके ऊपर आर्य समाज का प्रभाव था । वे अंधविश्वास और पाखंड में यकीन नहीं करते थे । उनके उपन्यास 'गोदान' में मातादीन तथा 'कर्मभूमि' में अमरकांत इसी के प्रतीक दिखाई देते है । हमारे यहाँ छुआछूत का रोग बहुत पुराना हो चुका था । 'कर्मभूमि' के अमरकान्त द्वारा चमारों के लिये सुधार कार्य करना तथा उनकी बस्तियों में निवास करना तथा सुखदा, नैना और डॉ. शान्तिकुमार इत्यादि लोगों का सामूहिक रूप में मन्दिर के अंदर प्रवेश करना समाज की

कुरीतियों के प्रति आक्रोश करना था । महात्मा गांधी ने भी इसी प्रवृत्ति के खिलाफ आन्दोलन चलाया था ।

'गोदान' में मेहता के संदर्भ में प्रेमचंद जी का कथन है कि ''किसी सर्वज्ञ ईश्वर में उनका विश्वास न था । यद्यपि वे अपनी नास्तिकता को प्रकट न करते थे, इसलिए कि इस विषय में निश्चित रूप में कोई मत स्थिर करना वह अपने लिए असम्भव समझते थे, पर यह धारणा उनके मन में दृढ़ हो गई थी कि प्राणियों के जन्म-मरण, सुख-दुःख, पाप-पुण्य में कोई ईश्वरीय विधान नहीं है---- ईश्वर की कल्पना का एक ही उद्देश्य उसकी समझ में आता था और वह था मानव जाति की एकता-प्राणिमात्र में एक आत्मा का निवास है । द्वैत, अद्वैत का व्यापारिक महत्व, उनके मानव-जाति को एक-दूसरे के समीप लाना, आपस में भेदभाव को मिटाना और भातृभाव को दृढ़ करना ही था ।''(१)

व्यक्ति एवं समाज को प्रताड़ित करने वाली प्रथाओं, परम्पराओं एवं रूढ़ियों के विरुद्ध प्रेमचंद युगीन समाज में जनमत तैयार किया जा रहा था । उस समय के प्रबुद्ध लेखकों ने नारी समस्या, जातीय भेदभाव, पारिवारिक समस्यायें, द्वेष, सामाजिक रूढ़ियाँ एवं परंपराएँ तथा समाज में व्याप्त अंधविश्वास को चित्रित करते हुए उसके समाधान को भी दर्शाने का प्रयास किया । समाज में पारिवारिक जीवन अत्यंत विषमताओं से युक्त था । आपसी सहयोग, प्रेम, विश्वास, समता जैसे भावों का सर्वथा अभाव दिखाई देता था । प्रसाद जी के अनुसार- ''भारतीय सम्मिलित कुटुम्ब की योजना की कडियाँ चूर-चूर हो रही थी । यह आर्थिक संगठन अब नहीं रहा, जिसमें कुल का एक प्रमुख सबके मस्तिष्क का संचालन करता हुआ, रूचि की समता का भार ठीक रखता था । हिन्दू समाज की बहुत सी दुर्बलताएँ उस खिचड़ी कानून के कारण है, प्रत्येक प्राणी अपनी व्यक्तिगत चेतना का उदय होने पर एक कुटुम्ब में रहने के कारण अपने को प्रतिकूल परिस्थिति में देखता है, इसलिए सम्मिलित कुटुम्ब का जीवन दुखदायी हो रहा है ।''(२)

भारतीय समाज का प्रमुख आधार उसका परिवार होता है । समाज के उत्थान से ही मानव जाति का उत्थान । परन्तु उस काल में मनुष्य अपने अंदर घृणा, विद्रोह, जलन, असहयोग जैसे भावों को समेटे हुए था ।

प्रेमचंद के उपन्यासों में नगरों में पूँजीपति एवं उद्योगपति तथा ग्रामीण क्षेत्रों में महाजन तथा जमींदार को शोषक के रूप में दिखाया गया है । गाँवों के अन्दर किसानों, पिछड़ी जातियाँ एवं हरिजनों का शोषण चरम पर था । इन लोगों की सामाजिक अवस्था भी अत्यन्त दयनीय थी । प्रेमचंद के मन में इन दलित, शोषित और कुचले हुए लोगों के प्रति अत्यन्त करुणा और सहानुभूति का भाव था । वे खुले मन से स्वीकार भी करते हैं कि अन्धविश्वास और रूढ़ियों पर आधारित अमानवीय परम्पराएँ एवं मान्यताएँ सामाजिक ताने-बाने के लिए बहुत ही घातक है । मनुष्य न तो ब्राह्मण है और न शूद्र । वह केवल मनुष्य है । प्रेमचंद जी ने 'कायाकल्प' में शोषण प्रवृति का उल्लेख करते हुए सामंतवादी व्यवस्था के बारे में कहा है कि ''देशी रियासतों में प्रजा मेरे पैरों की धूल है । मुझे अधिकार है कि मैं उसके साथ जैसा उचित समझूँ वैसा सलूक करूँ । किसी को हमारे और हमारी प्रजा के बीच में बोलने का हक नहीं है ।''(३)

जमींदार और सरकार दोनों ही अत्यन्त कठोरता के साथ, लगान वसूली और कुर्की के माध्यम से किसानों का भरपूर शोषण करते थे । दोनों के अंदर ही शोषितों के प्रति कोई दया, सहानुभूति का भाव नहीं था । अपने स्वार्थवश और ताकत के घमंड में इनकी झोपडियों का सर्वनाश करके घर से बेघर कर देते थे । इस युग में महात्मा गांधी के सक्षम नेतृत्व में देश की जनता पराधीनता की जंजीरों से मुक्ति पाने के लिए जबरदस्त संघर्ष कर रही थी । देश में कांग्रेस पार्टी द्वारा संचालित स्वतन्त्रता आन्दोलन कोने-कोने में फैल चुका था । यह युग अन्धविश्वास, रूढ़ियों और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जन-जागरण का युग था । जबकि दलितों और शोषितों के अंदर यह भावना कूट-कूट कर भरी थी कि उनका जन्म ही बड़ों की सेवा करने के लिए ही हुआ है । भाग्य के ऊपर भी उनका अटूट विश्वास रहता था ।

गाँधीवादी विचारधारा का प्रेमचंद जी के ऊपर गहरा प्रभाव था । उनके 'कर्मभूमि' उपन्यास में हरिजनों का मंदिर के अंदर प्रवेश करना एवं हरिद्वार में हरिजनों का लगान वसूली के विरुद्ध आंदोलन करना इस विचारधारा को सम्पूर्ण रूप से दर्शाता है ।

यशपाल के कथा साहित्य पर मार्क्सवाद का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता था । अंधविश्वास, भूख और अज्ञानता से पीडित समाज को दिशा दिखाने का महत्वपूर्ण कार्य उस समय के लेखकों द्वारा किया गया । इन सबका केन्द्र कलम के सिपाही प्रेमचंद ही थे । यशपाल के उपन्यासों में साम्यवादी चिंतन की झलक दिखाई पड़ती है जिसमें शोषण मुक्त समाज की रचना प्रमुख है ।

प्रसाद ने 'तितली' में दो परिवार की विषम परिस्थितियों का चित्रण किया है । एक तरफ इंद्रदेव का परिवार जहाँ आंतरिक विद्रोह चरम पर है । भाई-बहन माता-पुत्र के आपसी संबन्धों में दूरियाँ बढ़ रही है । कौटुम्बिक ढाँचा बिखर रहा है । जहाँ स्नेह, प्रेम के अभाव में जीवन दुःखों का पहाड़ बनता जा रहा था । जबकि सहयोग और परस्पर प्रेम ही कठिनाइयों से लड़ने का माध्यम बनते हैं । ये सामाजिक विडंबनाए, अंधविश्वास भारतीय समाज को वर्षो से छलते आ रहे है ।

प्रेमचंदोत्तर कथा साहित्यः

ऐसा कहा गया है कि कथाकार युग का निर्माण करता है वह युग निर्माता होता है । प्रेमचंद काल में साहित्यकारों ने समाज सुधार की दिशा में सराहनीय सहयोग दिया । समाज को रोशनी दिखाते हुए मार्ग-दर्शन दिया । समाज को अन्याय, शोषण, अत्याचार, कुँठा, द्वेष से दूर कर जीवन की कड़वी सच्चाइयों को सामने रखा और उनके जीवन को एक नई दिशा दिखाने का कार्य किया ।

प्रेमचंदोत्तर युग में अनेक नवलेखकों का आगमन हुआ । जिनमें अज्ञेय, यशपाल, जैनेन्द्र, अमृतलाल नागर, मोहन राकेश, भगवतीचरण वर्मा, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर और

निर्मल वर्मा प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है । महिला लेखिकाओं में प्रमुख रूप से शिवानी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा तथा मन्नू भंडारी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है ।

प्रेमचंदोत्तर कालीन कथा-साहित्य में मुख्यतः मनोवैज्ञानिक एवं समाजवादी इन दो प्रवृत्तियों के दर्शन स्पष्ट रूप से दिखाई देते है । इनमें प्रथम चेतना के रूप में जैनेन्द्र की दार्शनिकता संबंधित मनोविश्लेषणवादी कथा-साहित्य तथा इलाचंद्र जोशी तथा अज्ञेय की 'स्वप्न' एवं 'काम' सिद्धान्तों से प्रेरित कहानियाँ आती है ।

यशपाल जी दूसरी सामाजिक परंपरा के समझे जाते हैं । उनके अपने कथा-साहित्य में मार्क्सवाद को आधार बनाकर समाज में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार किया गया है । नागार्जुन, अश्क, रांगेय राघव, राहुल एवं नागर जी आदि ने भी इसी परंपरा का निर्वाह करते हुए सशक्त कथा-साहित्य प्रदान किया । मनोविज्ञान पर आधारित एक दूसरी कथा-चेतना का विकास जैनेन्द्र के रूप में सामने आया ।

अज्ञेय व्यक्ति चरित्र के सशक्त जानकार के रूप में सामने आते हैं । चरित्र की गुत्थियों को प्रत्येक स्तर पर सामने लाने की क्षमता उनके साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है । 'रोज' कहानी में आम आदमी के जीवन की पीड़ा साफ दिखाई देती है तथा कोठरी की बात, द्रोही आदि कहानियों में कहानी का नायक विद्रोही की भूमिका निभाता नजर आता है ।

जैनेन्द्र ने अपने साहित्य में, जिसमें कहानी और उपन्यास दोनों ही आते है । इसके अन्तर्गत उन्होंने व्यक्ति की चेतना के विभिन्न पहलुओं को अलग-अलग ढंग से व्याख्यायित किया है । उनके कथा साहित्य पर फ्रायड के मनोविज्ञान तथा गाँधीवादी जीवन दर्शन का प्रभाव दिखाई देता है । सामाजिक समस्याओं को स्त्री-पुरुष के आपसी संबंन्धों के परिप्रेक्ष्य में जैनेन्द्र जी ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से देखने का प्रयास किया है । प्रेम की समस्या, शादी के बाद अन्य से प्रेम उनके सभी उपन्यासों में पाया जाता है । पारिवारिक समस्याओं के संदर्भ में, वे स्त्री पुरुष

के आपसी प्रेम संबंधों पर आध्यात्मिक और दार्शनिक रंग चढाने के प्रयास में मूल समस्याओं से दूर होते दिखाई देते हैं ।

जैनेन्द्र जी ने कथा-साहित्य को एक नवीन दिशा दी है । 'मास्टर साहब', 'जान्हवी', 'पत्नी' इत्यादि कहानियों को पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि ये एक ऐसा निबन्ध है जिसमें एक कथा भी साथ-साथ चल रही है ।

जैनेन्द्र जी के उपन्यासों में दमित वासनाओं का ज्वालामुखी, स्वछन्द प्रेम की अनुभूति तथा अतृप्त जीवन की झाँकी दृष्टिगोचर होती है । 'सुनीता' उपन्यास में जय-पराजय, हिंसा-अहिंसा तथा प्रेम और विवाह जैसी सामाजिक समस्याओं को उठाया है । मध्यमवर्गीय घुटन, पीड़ा, निराशा को व्यक्ति के चिंतन के आधार पर व्यक्त तो किया है परन्तु समस्याओं का कोई समाधान नहीं दिया ।

इस काल में अज्ञेय, जैनेन्द्र जी के अतिरिक्त इलाचंद जोशी, यशपाल तथा किशोरीलाल गोस्वामी ऐसे कथाकार है जिन्होंने साहित्य को नवीन दिशा देने का प्रयास किया है ।

इस काल में भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतराय, विष्णु प्रभाकर, हंसराज रहबर, डॉ. रांगेय राघव तथा अमृतलाल नागर का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है । इन कथाकारों के साहित्य में समाजवादी दर्शन, आधुनिकता बोध तथा मनोवैज्ञानिक उपलब्धियाँ आदि तत्व दृष्टिगोचर होते है ।

व्यक्तिवादी चेतना के कथाकार के रूप में इलाचंद जोशी का नाम आता है । वे अपने कथा साहित्य में जटिलतम समस्याओं को सामाजिक यथार्थ से अलग हटकर सुलझाने का प्रयत्न करते है । उनके सभी उपन्यासों के पात्र ऐसे नहीं है जो वास्तविक जीवन से लिये गये दिखाई देते हो । उनके उपन्यासों में व्यक्ति के अन्तर जगत का विश्लेषण अवश्य दिखाई देता है । जोशी जी का यह कथन है कि ''पूँजीवादी संस्कृति व्यक्ति के 'अहंभाव' का पोषण करती

है और व्यक्ति का अहंभाव ही आधुनिक जीवन की अस्वस्थ स्थिति के लिए उत्तरदायी है ।''(४)

मार्क्सवाद के दर्शन को साहित्य में स्थापित करने का प्रयास करने वाले कथाकारों में यशपाल जी का नाम सर्वप्रथम आता है । इनकी कहानियों में सामाजिक विषमताओं, व्यक्ति और समाज का वर्ग संघर्ष, खोखली मान्यताएँ तथा निरर्थक जीवन मूल्यों से लड़ने, मुकाबला करने की आवाज सुनाई पड़ती है । 'पराया सुख', 'धर्मरक्षा' तथा 'चित्र का शीर्षक' आदि कहानियों में उपरोक्त दर्शन दिखाई देता है । और यही तेवर उनके 'दादा कामरेड', 'सिंहावलोकन' तथा 'कामरेड' जैसे उपन्यासों में झलकता है । यशपाल को समाजवादी कथा लेखक के रूप में जाना जाता है । यशपाल जी की कहानियाँ और उपन्यास परिवर्तित जीवन मूल्यों को प्रेषित करने में सफल रहे है ।

प्रमुख घटनाएँः

भारत की आजादी और द्वितीय विश्वयुद्ध का भारतीय समाज के ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा । यह काल नवजागरण काल के नाम से जाना गया । इस काल में कुछ अपने तथा विदेशों से आयातित ज्ञान ने सामाजिक संस्कृति, रीति-रिवाज, मानव जीवन दर्शन तथा धर्म इन सभी को छिन्न-भिन्न कर दिया । मूल्यों के विघटन एवं अवमूल्यन का ऐसा दौर प्रारम्भ हुआ जिसका अन्त दूर-दूर तक निकट भविष्य में नहीं दिखाई दे रहा था । विज्ञान की अद्‌भुत उपलब्धियों ने समाज को नए आयाम और नई दिशा देने का रास्ता तो दिखाया किन्तु साथ ही साथ जटिलताओं और समस्याओं को भी साथ लेकर आया । ऐसी कठिनतम और ज्वलन्त स्थितियों में द्वितीय विश्वयुद्ध ने आग में घी डालने का कार्य किया ।

विश्वयुद्ध ने हमारी सामाजिक व्यवस्था को खण्ड-खण्ड कर दिया साथ ही साथ आर्थिक मोर्चे पर भी इस युद्ध का गहरा प्रभाव पड़ा । इस युद्ध के पश्चात हमें स्वतन्त्रता तो

मिली परन्तु उसके साथ ही भीषण रक्तपात, देश का विभाजन, करोड़ों परिवारों का बेघर होना, भुखमरी, लूट-पाट, भीषण हत्याएँ जैसे दृश्य भी सामने आए । इन सारी घटनाओं का साहित्यकारों या कथाकारों के ऊपर गहरा प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था । विज्ञान की उपलब्धियों के साथ समस्याओं और जटिलताओं का सृजन किया जिससे मानव जीवन का संघर्ष और कठिनतम होता गया । जीवन के मूल्यों का विघटन अपनी चरम सीमा को छू रहा था । विज्ञान ने हमारे भावना पक्ष को कमजोर करना शुरू कर दिया । प्रचलित व्यवस्थाओं और मान्यताओं का क्षरण हो रहा था । जीवन के उतार-चढ़ाव में एक व्यक्ति का स्वार्थ दूसरे व्यक्ति के स्वार्थ से टकराने लगा । सत्य, नैतिकता, आदर्शों के लिए सामाजिक जीवन में कोई मूल्य नहीं रह गया । नैतिक मूल्यों के पतन से जीवन में निराशा और पलायनवादिता आने लगी ।

भारत को विभाजन की त्रासदी को झेलते हुए आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक, प्रत्येक मोर्चे पर भयंकर संघर्ष करना पड़ा । फलस्वरूप मान्यताओं, आदर्शों और अनेक सामाजिक मूल्यों का विघटन होने लगा । कई देश टुकडों में विभाजित हो गये । समाज समूहों में तथा वर्गों में बँट गया । यत्र-तत्र-सर्वत्र एक घुटन और टूटन दिखाई दे रही थी । प्रेमचन्दोत्तर साहित्य में समाज की इन जटिलतम स्थितियों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है । जीवन की जटिलता और भोगी हुई अनुभूतियाँ इस काल के साहित्य में प्रमुखता से उभरकर आई है । साहित्यकार या कथाकार अपने आस-पास की परिस्थितियों से हट कर नहीं लिखता । वह जो देखता है, भोगता है वही उसके साहित्य में दिखाई देता है । इसलिए उसे समाज का दर्पण और युग निर्माता कहा जाता है ।

वेद राही की 'दरार' कहानी में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि जब व्यक्ति के अपने ऊपर कोई संकट आता है तो वह सारी नैतिकता, जिम्मेदारियाँ और कर्तव्यों को भूल कर सिर्फ अपनी रक्षा करना चाहता है । इस कहानी में युद्ध की भयंकर विभीषका का चित्रण अत्यन्त सुन्दर तरीके से वर्णित किया गया है ।

'अंधेरे बंद कमरे' नामक उपन्यास सन् १९६१ में प्रकाशित हुआ था, जिसे मोहन राकेश जी ने लिखा था । इस उपन्यास में लेखक ने मध्यमवर्गीय जीवन का चित्रण दिखाया है । इसमें मोहन राकेश विवाह की निरर्थकता को कलात्मक ढंग से चित्रण करते है । एक ही छत के नीचे रहकर वैवाहिक मान्यताओं से कटा हुआ महसूस करना मानव मूल्यों के विघटन की स्थिति को उभारता है । इसी संदर्भ में उषा प्रियंवदा की 'वापसी' नामक कहानी का उल्लेख आवश्यक हो जाता है, जिसमें टूटती हुई पारिवारिक संस्था में विघटन की जटिलतम स्थितियों को दर्शाया गया है । इस कहानी में उषा जी ने गजाधर बाबू की त्रासदी का चित्रण किया है । कहानी के कथ्य में भावुकता दम तोड़ती दिखाई देती है । नरेन्द्र मोहन जी कहते हैं कि ''सीधे मानव स्थितियों से कृति की बुनाई में जुड़ता है और अपनी रचनाधर्मिता का परिचय कराता है । ये मानव स्थितियाँ कहीं सामाजिक यथार्थ के ठोस संदर्भो से जुड़ती है तो कहीं वैयक्तिक यथार्थ के गहरे आंतरिक स्तरों से ।''(५)

औद्योगिकरण और नगरीकरण के परिणामस्वरूप पारिवारिक विघटन का दंश समाज में आया । लोग गाँवों को छोड़कर शहरों की ओर पलायन करने लगे । घर की दीवारों को तोड़ नारी बाहर निकलने लगी । इन समस्त स्थितियों तथा मानव-मूल्यों के ह्रास का चित्रण उस समय के कथाकारों ने अपनी अपनी कहानियों और उपन्यासों में अत्यन्त ही मार्मिक और बेबाकी के साथ चित्रण किया है । उनमें निर्मल वर्मा का 'वे दिन' उषा प्रियंवदा का 'रूकोगी नही राधिका' तथा 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', ममता कालिया का 'बेघर', मृदुला गर्ग का 'उसके हिस्से की धूप', नरेश मेहता का 'यह पथ बंधु था', कृष्णा सोबती का 'डार से बिछुड़ी' तथा राजकमल चौधरी का 'मछली मरी हुई' आदि उपन्यास उल्लेखनीय है ।

आधुनिकता के नाम पर जिन मानव मूल्यों को तोड़ने के लिए आक्रामक रुख अपनाया था, उन्हीं मूल्यों की आकांक्षा में सुख-सुविधा, भोग-विलास की इच्छा से वे स्वयं ग्रसित रहे । इस युग के साहित्यकारों की कथनी और करनी में बहुत बड़ा अन्तर स्पष्ट दिखाई देता है

। उनका समस्त लेखन व्यक्ति को समाज से काटने का प्रयास दिखाई देता है । इस युग के कथाकारों ने आधुनिक बोध को सामने रखकर कथाकारों ने अविश्वास, अनास्था तथा मानसिक विकृतियों को खोल कर रख दिया है, मानव मूल्यों में आती गिरावट और खोखलेपन को उजागर किया है । एक बात अवश्य है कि यह सब उन्होंने अपने को नहीं समाज को बदलने के लिए किया, जिसे बदलने की उनमे न सामर्थ्य है और न ही शक्ति ।

इस युग के कथा साहित्य में एक रूकावट सी नजर आती है जो साहित्यकारों के अपने ही अन्तर्द्वन्दो की फलश्रुति है ।

समाज के अन्तर्द्वन्दों से जूझता हुआ साहित्यकार विवशतावश इन जटिल परिस्थितियों को देखता रहा । तमाम कुशलता को बावजूद बेबसी उसके ऊपर हावी रही । बदलते सामाजिक परिवेश और परिस्थितियों तथा शहरीकरण व पश्चिमी प्रभाव की वजह से साहित्यकार स्वयं को एक अलग ही परिवेश में ले जाने की कोशिश करता रहा । फलस्वरूप उसे कुँठा, भय, बिखराव, निराशा तथा विघटन का आभास होता रहा ।

अतः इस युग के कथाकारों के संबंध में यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उन्होंने स्वस्थ मनःस्थिति के साथ अपने लेखकीय धर्म को निभाने का प्रयास किया है ।

१. पारिवारिक विघटन

२. दाम्पत्य जीवन

३. विवाह की प्रासंगिकता

४. उपेक्षित एवं एकाकी संतान

५. नारी की स्वतन्त्रता

६. नारी के प्रति अपराध

७. पीढ़ी–अन्तराल

८. महानगरों का परिवेश

९. शहरी जीवन में सांस्कृतिक मूल्य

१०. वेश भूषा

११. खान–पान

१२. धार्मिक मूल्य

१३. काम–संबंधी मूल्य

१४. नैतिकता

प्रेमचंदोत्तर युग के समस्त साहित्यकारों ने अपने–अपने साहित्य में उपरोक्त मूल्यों को केन्द्र बिन्दु बना कर साहित्य का सृजन किया । अतः हम देखते हैं कि प्रत्येक युग का साहित्यकार वातावरण तथा समाज में घटती घटनाओं को महसूस करता हुआ समाज को एक दिशा देने का प्रयास करता है । उसके साहित्य में उस काल की घटनाओं का प्रभाव हमेशा दृष्टिगोचर होता है ।

संदर्भः

१. गोदान– प्रेमचंद, पृ. ३०९

२. तितली– जयशंकर प्रसाद, पृ. ११०

३. कायाकल्प – प्रेमचंद, पृ. ५८

४. साठोत्तरी हिन्दी कहानी, पृ. १६

५. आधुनिकता और समकालीन रचना संदर्भ – नरेन्द्र मोहन, पृ. १०१

३. राजेन्द्र यादव की कहानियों का विश्लेषण

लगभग १९०५ से हिन्दी कहानी का आरम्भ माना जाता है । हिन्दी कहानी पर शुरूआती दौर में बंगला और अंग्रेजी का गहरा प्रभाव रहा । सदल मिश्र ने १९वी सदी के आरम्भिक काल में 'नासिकेतोपाख्यान' तथा ईशा अल्लाखों ने 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की । यथार्थ के धरातल पर चलने वाली विधा का नाम कहानी है । सामाजिक समस्या, दर्शन या विचार को आधार बनाकर कहानी की रचना की जाती थी ।

किशोरीलाल गोस्वामी द्वारा लिखित 'इन्दुमती' कहानी को हिन्दी की सर्वप्रथम कहानी माना है । जो 'सरस्वती पत्रिका' में प्रकाशित हुई और प्रथम मौलिक कहानी होने का श्रेय 'दुलाईवाली' को जाता है जिसे सन् १९०९ में बंग महिला नाम से एक महिला ने लिखा था । हिन्दी कहानी उत्तरोत्तर विकास को हम चार युगों में विभक्त करते हैं ।

१. भारतेन्दु युग

२. प्रेमचंद युग

३. प्रेमचंदोत्तर युग

४. आधुनिक युग

१. भारतेन्दु युग

इस युग में 'इंशा द्वारा' लिखित 'रानी केतकी की कहानी' लल्लूजी द्वारा 'प्रेम सागर' सदल मिश्र द्वारा 'नारिकेतोपाख्यान' भारतेन्दु द्वारा 'एक अदभुत अपूर्व स्वप्न' तथा राधाशरण गोस्वामी द्वारा लिखित 'यमलोक की यात्रा' नामक कहानियों का नाम आदर के साथ लिया जाता है ।

किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' बंग महिला की 'दुलाईवाली' भगवानदास की 'प्लेग की चुडैल' तथा केशव प्रसाद सिंह की 'चन्द्रलोक की यात्रा' कहानियाँ 'सरस्वती' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई । इस समय के कहानीकार भविष्यवक्ता के स्वरूप में नजर आते है । ये कहानियाँ शाश्वत मूल्यों की झांकी दिखाती है । इनमें यथार्थवाद और प्रकृतिवाद स्पष्ट झलकता दिखाई देता है ।

२. प्रेमचंद युगः

कलम के सिपाही 'प्रेमचन्द' इस युग के सर्वोत्तम कहानीकार के रूप में धरातल पर उतार कर जीवन की वास्तविक एवं कड़वी सच्चाई को पाठकों के सामने लाने का दुष्कर कार्य किया और वे इसमें सम्पूर्ण रूप से सफल भी रहें । अत्यन्त सीधे और सपाट तरीके एवं कलात्मकता के साथ मानवजीवन की समस्याओं, शोषण, अंधविश्वास, छूआछूत तथा विविध प्रकार की कुरीतियों के खिलाफ आक्रोश को सामने लाए । सन् १९१६ में उनकी प्रथम कहानी 'पंच परमेश्वर' हिंदी में प्रकाशित हुई । उन्होंने हमेशा शोषण के खिलाफ आवाज उठाई । समाज का वो वर्ग जो अछूत माना जाता था, उस वर्ग का प्रतिनिधित्व उनकी कहानियों में मिलता है । गरीब किसान मजदूर और शोषित समाज के शोषण की गूँज उनके साहित्य में सुनाई देती है ।

श्री राधिकारमन सिंह प्रसाद, विश्वम्भर कौशिक, ज्वालादत्त शर्मा तथा गुलेरी जी का नाम इस युग के अन्य कहानीकारों के रूप में अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है ।

३. प्रेमचंदोत्तर युगः

इस युग में जैनेन्द्र, इलाचंद जोशी, अज्ञेय तथा यशपाल का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है । प्रेमचंद के पश्चात इन कहानीकारों ने हिन्दी कहानी के विकास को नई दिशा

देने का प्रयास किया । इस दौरान साहित्य में 'चरित्र' पर अधिक बल दिया गया जबकि प्रेमचंद के समय में घटना तत्व पर अधिक बल दिया जाता था ।

इसी युग में कहानी के क्षेत्र में श्री उपेन्द्र नाथ 'अश्क', शंभूनाथ सिंह तथा आरती प्रसाद जी के योगदान को कैसे भुलाया जा सकता है जिन्होंने समाज को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया ।

४. आधुनिक युगः

भारत की आजादी के पश्चात तत्कालीन परिस्थितियों का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा । उस दौर में हमारी सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई थी । फलस्वरूप हिन्दी कहानी में कुछ नवीन प्रवृत्तियाँ उभर कर सामने आई । उसी दौर में आँचलिक कहानी और नयी कहानी का विकास हुआ । नए-नए शिल्प नये विचार बोध तथा नए विषय हमारे सामने आए । कमलेश्वर, मन्नू भंडारी, राजेन्द्र, मोहन राकेश, आनन्द प्रकाश, रमेश वक्षी आदि कहानीकार इस श्रेणी में आते हैं ।

स्वाधीनता के पश्चात जो विषम परिस्थितियाँ हमारे देश में उत्पन्न हुई यथा-खून-खराबा, विभाजन की त्रासदी, लूट-पाट, बेघर होना, मानवीय मूल्यों का क्षरण होना, इसके फलस्वरूप साहित्य में एक नया मोड़ आता है । यथार्थ और नई संवेदना से प्रेरित इस युग की कहानियों को 'नयी कहानी' के नाम से जाना गया । 'नये जीवन मूल्य' और नये भाव बोध को अभिव्यक्ति देने का कार्य नयी कहानियों के अन्तर्गत किया गया । नयी कहानी का लक्ष्य अभिव्यक्ति है । नवीन विचारों की अभिव्यक्ति, अभिनव शैली का प्रयोग तथा युग के बदलते हुए संदर्भ में संक्रमणशील स्थापना नयी कहानी की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ है । अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि नयी कहानी की मुख्य प्रवृत्ति है । परम्परागत नैतिक मूल्यों को तथा मान्यताओं को

त्यागकर नए जीवन मूल्यों का आदर्श सामने लाने का कार्य नयी कहानी के माध्यम से किया गया है । नयी कहानी के नामकरण का श्रेय दुष्यन्तकुमार को दिया जाता है ।

नवीन जीवन मूल्य की अभिव्यक्ति, आस्था, अनास्था का प्रश्न, सामाजिक विघटन और विद्रोह, व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध, निम्न वर्ग और मध्य वर्ग ये सब ज्यादातर नयी कहानी के विषय रहे है । बदलते हुए यथार्थ और नयी संवेदना से स्फुरित इस युग की कहानियों को नयी कहानी के नाम से अभिहित किया गया ।

नयी कहानी के बहुत से पात्र प्रतीकात्मक है । शिवप्रसाद की कहानी 'कर्मनाशा की हार' के नायक 'भैरो पांडे' एक ऐतिहासिक शक्ति के प्रतीक है । भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' की माँ प्राचीनता की प्रतीक है । नरेश मेहता की कहानी 'समर्पित महिला' और निर्मल वर्मा की 'लवर्स' आदि के पात्र प्रतीकात्मक हैं ।

भाव विचार एवं शिल्प के क्षेत्र में नयी कहानी की उपलब्धियों को देखते हुए यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि 'नयी कहानी' ने अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बना लिया है और अपने महत्व की भी स्थापना कर ली ।

नयी कहानी का यथार्थपन राजेन्द्र यादव के कथानक में पूरी तरह से मौजूद है । उन्होंने साहित्य जगत को ९० से अधिक कहानियाँ दी है । उन्होंने समाज के यथार्थ पर ध्यान दिया है, साथ ही शहरी जीवन तथा दलित वर्ग की ओर भी अपनी दृष्टि डाली है । वे यथार्थ के हस्ताक्षर है ।

इस दौर में नई कहानी भी नई कविता के सदृश 'अकहानी', 'सचेतन कहानी', एवं 'अचेतन कहानी' के रूप में सामने आई । विद्वान आलोचकों का कहना है कि साहित्य की विधा बदलते हुए जीवन को पकड़ने और व्यक्त करने में सशक्त माध्यम बन रहा है । धनंजय वर्मा के अनुसार-''जो संशयग्रस्तता और व्यर्थता, जो संत्रास और निर्वासन, जो अजनबी और

अकेलापन, जो मृत्यभय, ऊब और टूटन इन दिनों के वातावरण में फैल रही है, उसी का उद्‌घाटन इधर के कहानीकार पूरी बोल्डनेस के साथ कर रहे हैं । मुमकिन है कुछ लोगों को वे मनोदशाएँ आरोपित लगती है...ये स्थितियाँ किंचित अतिरंजित भले लगे, इन्हें निराधार नहीं कहा जा सकता ।''(१)

नयी कहानी के लेखकों ने जीवन की निराशाजन्य विकृतियों को विशेष रूप से उभारा है । विज्ञान की उपलब्धियों को न देखते हुए केवल निषेधात्मक मूल्यों को ही देखा है । राजेन्द्र यादव के शब्दों में...''आज का कहानीकार यह मानता है कि युग के सारे विराट को, गतिशील मूल्यों के संस्कारों और संक्रमण को कहानी के माध्यम से हम व्यक्ति या व्यक्ति-समूह की चेतना-धारा में, कभी-कभी चेतना के अनेक स्तरों पर एक साथ पकड़ने की कोशिश करते है । काल के प्रवाह में व्यक्ति की सामाजिकता का बोध व्यक्ति को उसकी समग्रता में देखने का आग्रह करता है । व्यक्ति को उसके सामाजिक परिवेश, मानसिक अन्तर्द्वन्द्व तथा व्यावहारिक जीवन के तकाजों तथा अन्य आवश्यकताओं की एक संश्लिष्ट प्रक्रिया के रूप में पाना चाहता है । इसलिए कहानी का कोई भी तत्व निमित्त या आलंबन बन कर नहीं, स्वयं आश्रय या विषय वस्तु बन कर आता है । परिणामतः इन दस वर्षो की कोई भी कहानी उठा लीजिए, उसका प्रभाव परिणति एक झटके के साथ देखा या पाया हुआ सत्य नहीं होता । न वह हथौड़े की तरह रिसती है । वह तो कुहासे या अगरूगंध की तरह समस्त चेतना पर छा जाती है-स्वयँ उसका अंश बन जाती है । इस प्रकार अनजाने ही आत्मा को संस्कार और दृष्टि देती है ।''(२)

सर्वत्र फैले हुए नैराश्यपूर्ण जीवन की समस्याओं, अस्तित्वहीनता, अमानवीयता के असीमित साधनों के फलस्वरूप नयी कहानी का निर्माण हुआ । पारिवारिक विघटन की स्थिति में समाज का बहुत अधिक योगदान है । स्त्री पुरुष दोनों के मध्य बढ़ती वैमनस्यता और अनाधिकार चेष्टा के प्रदर्शन के फलस्वरूप नयी कहानी के अन्तर्गत विस्तृत परिवेश की आधुनिकता को लेकर आई है । इसका प्रतिबिम्ब मोहन राकेश की 'एक और जिंदगी', राजेन्द्र

यादव की 'खेल खिलौने' निर्मल वर्मा की 'लंदन की एक रात' तथा कमलेश्वर की 'दुःखों के रास्ते' में स्पष्ट दिखाई देता है । डॉ. धनंजय के अनुसार-''आज की कहानी को दृष्टि के स्तर से समझा जाना चाहिए । जीवन और परिवेश से संपृक्ति की गहराई से अद्‌भुत समग्र अनुभव के जरिए रचनाकार की एक तात्कालिक दृष्टि बनती है, जो एक ओर उसे पुराने मूल्यों और व्यवस्थाओं से सतर्क रखती है, दूसरी ओर उस एवज में, नयी वैचारिकता को जन्म देती है ।''(३)

यादव जी की कहानी के मूल में आधुनिकता की चुनौती स्पष्ट रूप से दिखाई देती है । इनकी कहानी 'प्रतीक्षा' हो या 'ढ़ोल' हो, इसमें आधुनिकता का बोध नगर-बोध से बुरी तरह जुड़ा हुआ है । 'प्रतीक्षा' कहानी में कहानी की नायिका रीता अपने प्रेमी का इंतजार करते-करते उम्र गुजर जाती है उसे सारे नगर से अलग रहकर अकेले ही जीवन-यापन करना पड़ता है । इस कहानी में गीता के जीवन के प्रत्येक पहलू को दर्शाया गया है । अकेलेपन, घुटन, संत्रास से त्रस्त होते हुए नन्दन को अपने पास रख लेती है । अपनी इज्जत की चिंता न करते हुए हर्ष तथा नंदन को अपने घर में रखकर, उनकी रासलीला देखकर प्रफुल्लित होती है ।

'तलवार पंचहजारी' कहानी में लालू के पुरखे झूठी शान-शौकत का 'पंचहाजी खिताब' लेते है और रायसाहब का खिताब भी जबरदस्ती लेते है । खिताब के बल पर गरीबों का शोषण करते है । तलवार पंचहजारी से वे डाके डालते हैं । बाद में डाके डालना छोड़ देते है, लेकिन किसानों को लगान न देने पर पेड़ से उल्टा लटका कर धूनी देते थे, किसी को जूतों से पीटते थे । इस कहानी में मूल्य-संघर्ष पुरानी पीढ़ी का ही नहीं, सामंती और आधुनिक मूल्यों का भी है । रायसाहब के लिए थी तो कुल मर्यादा, परन्तु अन्नदाता और मालिक कहलाने वाले ये सामन्त शराबखोरी और अय्याशी के पर्याय है । उस परम्परा के अवशेष रायसाहब का लालू एकदम नकार देता है । तलवार को तोड़कर उस्तरे बनवा लेना पूरी तरह से सामन्ती मूल्य व्यवस्था को अस्वीकार है ।

'एक कमजोर लड़की' की कहानी में सविता का पति कोई और है तथा प्रेमी कोई और । ज्यों ही सविता का वैवाहिक जीवन आरम्भ होता है उनमें दरारे पड़ना शुरु हो जाती है । सविता अपने मानसिक संघर्षो से जूझती हुई अपने पति से अपने पूर्व प्रणय-संबंधों के बारे में बताती है- ''सच बताएं, जो, तुमने सुना था, वह भी गलत नहीं था तथा हमारे और तुम्हारे बीच वह नहीं है, यह सच भी सच है ।''(४) दुःख तो यह है कि वह दोनों में से किसी को भी अपने जीवन से हटा नहीं पाती । फलस्वरूप वह प्रेमिका और पत्नी दोनों की भूमिका निभाने को बाध्य हो जाती है । जब यह रहस्य खुलता है तो उसका पति कहता है कि अपने प्रेमी को जहर दे दो । अपने वैवाहिक जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रेमी को जहर देना साहसिक लेकिन पारम्परिक कदम ही प्रतीत होता है । यहाँ उसका मानसिक संघर्ष और पीड़ा अत्यधिक गहन बन जाती है । निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि आज भी सविता जैसी कमजोर लड़कियाँ हमारे समाज में मौजूद हैं जो अभी भी डरी और सहमी है ।

'खुली हुई साँझ' कहानी में सभ्रान्त महिला थोड़ी देर के लिए एक अजनबी युवक की दोस्त बन जाती है । यह सभ्रान्त परिवार में पनपती ऐय्याशी और अकेलेपन का एक उदाहरण है । इस कहानी में उन्मुक्त जीवन-दर्शन की झलक दिखाई देती है । शहरों में मनुष्य आत्मलीन हो चुका है उसे नैतिकता और यौन शुचिता से कोई लेना-देना नहीं है । समाज में नैतिक मूल्यों का क्षरण हो रहा है । पुरुष और स्त्री के संबंध पशु समान होते जा रहे है । पवित्रता जैसे भाव का कोई स्थान नहीं रह गया । महानगरीय मित्रता का आवरण ओढ़े अस्तित्व को खोने की बैचेनी हर आदमी की त्रासदी है । जिसको कहानीकार ने अपनी कहानी में सशक्त तरीके से उभारा है ।

भय कहानी में गैरेज मालिक तथा उसके यहाँ काम करने वाले बच्चों के संदर्भ में कही गई कहानी है । इसमें रहीम नाम का बालक गैरेज में काम करता है । और भी कई बच्चे काम करते हैं । गैरेज मालिक बहुत ही कम पैसे देकर छोटे-छोटे बच्चों का शोषण कर रहा । भय

बच्चों के ऊपर हावी है और उनकी मेहनत का कोई भी मूल्य मालिक की निगाह में नहीं है । बच्चों की यह विड़ंबना है कि जाए तो आखिर जाए कहाँ । इसलिये गालियाँ और पिटाई सहने के बाद भी वहीं काम करने को बाध्य है । दूसरी जगह भी जायेंगे तो काम तो करना ही पड़ेगा । इस कहानी में निम्नवर्गीय पात्रों को आधार बनाया गया है । रहीम के अलावा अन्य पात्र भी अपमानजनक और पशु से भी बदतर जीवन जीते है । रहीम का कथन है कि- ''मालिक से क्यों डरेंगे ? काम नहीं करेंगे तो मारेगा ही ।''(५)

मजबूरी इन्सान को किस कदर मजबूर कर देती है कि वह प्रत्येक परिस्थिति को स्वीकार करता चला जाता है और अपना शोषण करवाता हुआ, वही अपनी नियति समझ लेता है । आर्थिक विपन्नता किस हद तक मार खाने को विवश करती है वह हमें रहीम के माध्यम से पता चलता है । यहाँ आर्थिकता व्यक्ति को पंगु बना देती है ।

'जहाँ लक्ष्मी कैद है' में लालच के भाव को दर्शाया गया है । लालची पात्र के रूप में रूपाराम सामने आता है । उसकी पुत्री का नाम लक्ष्मी है । अंधविश्वास और लालच के वशीभूत होकर रूपाराम अपनी पुत्री की मानवीय आकांक्षाओं का गला घोंटकर उसे कैदी जीवन जीने के लिए बाध्य करता है । परिणाम स्वरूप उसे बीमारी हो जाती है । रात-रात भर रोती और बिलखती रहती है लेकिन रूपाराम पर कोई असर नहीं होता और वह बेटी को कैद से नहीं छोड़ता ।

लक्ष्मी बेहद आक्रोशित होकर अपने बाप से कहती है- ''ले तूने मुझे अपने लिए रखा है, मुझे खा, मुझे चबा, मुझे भोग...ऐसे माहौल में उसे दौरा पड़ता है- तब वह घंटे दो घंटे में पागल हो जाती है, उछलती कूदती है, बुरी-बुरी गालियाँ देती है, चीजें उठा-उठा कर फैंकती है । सारे कपड़े उतारकर नंगी हो जाती है ।''(६)

शोषण और नारी का बड़ा गहरा संबंध है । वह अनेक रूप धारण करती है- यथा बेटी, पत्नी, बहन, माँ । प्रत्येक चरण में उसका शोषण होता रहा है । बस उसके रूप अलग रहते है ।

'कुतियाँ' कहानी में यौन शोषण के संबंध में प्रकाश डाला गया है । लाला जो बहुत पैसे वाला है, एक खूबसूरत जवान लड़की को अपने पास रखकर उसका यौन शोषण करता रहता है । लगभग आठ नौ साल तक यही क्रम चलता रहता है । बार-बार वह शादी का भरोसा देकर उससे खेलता रहता है, अंत में घर से निकाल देता है ।

कुतिया को माध्यम बना कर लेखक ने नारी और कुतिया के जीवन में साम्यता दिखाई है । कुतिया जब छोटी थी, तब लेखक को बेहद अच्छी लगती थी, परन्तु जब वह बड़ी हो जाती है लेखक उसे नापसंद करने लगता है । वैचारिक असमानता, वर्गगत विषमता और स्त्री-पुरुष संबंधों में कटुता इस काल में सर्वत्र दिखाई देती थी साथ ही समाज में मानव मूल्यों का क्षरण हो रहा था । इसी को आधार बना कर यादव जी ने 'बिरादरी बाहर' नामक कहानी को रचा।

'बिरादरी बाहर' कहानी में पिता को बहुत उपेक्षित दिखाया गया । उसका अपनी संतानों के ऊपर कोई वश नहीं है । उसकी डाँट-फटकार का उसकी संतानों पर कोई असर नहीं होता । पुत्र बाहर जाकर उसकी कोई खोज-खबर नहीं रखते, पत्र भी नहीं लिखते । बेटी उनकी इच्छा के विरुद्ध अपनी मर्जी से विजातीय विवाह कर लेती है । अतः पिता गहरी साँसे खींचते हुए स्वयं से कहते है- ''कुछ नहीं, कुछ नहीं कोई किसी का नहीं है... न किसी को प्रतिष्ठा की चिंता है, न माँ-बाप की... लड़के अपनी बहुओं में मस्त है... लड़कियाँ अपने-अपने घर देखती है ।''(७)

'लंच टाइम' कहानी मध्यवर्गीय समाज का शोषण दिखाया गया है । शोषण हर तरफ से होता है, वह चाहे उसके मालिक के द्वारा हो या किसी सरकारी संस्थान के माध्यम से ।

इस कहानी का पात्र देवी सहाय है, जो अनपढ़ है, परन्तु ईमानदारी से जीवन व्यतीत कर रहा है । परन्तु टल्लूमल फर्म देवी सहाय की छह महीने की तनख्वाह नहीं देती है । वह अपना काम अपनी जिम्मेदारी समझ कर बहुत ही मेहनत के साथ करता है, परन्तु शोषक वर्ग उसका शोषण करते हैं और उससे काम करवा कर उसका पैसा उसे नहीं देते हैं । न्यायालय में न्याय के नाम पर उसका शोषण किया जाता है । जहाँ वह न्याय की उम्मीद से जाता है । इस कहानी में देवी सहाय के साथ उच्च मध्यवर्गीय समाज के लोग शोषण करते हैं, इसके खिलाफ अनपढ़ और मजबूर वह किसी से न तो कुछ कह पाता है और न ही कुछ कर पाता है । नोटिस या टिकट के बहाने मुंशी और वकील उसके सारे पैसे ले लेते हैं तो कही रजिस्ट्री के नाम पर उससे पैसे निकलवा लेते है । शोषण की पराकाष्ठा तो तब होती है जब वह अपनी बीमार बहू के लिए फल लाता है तो ये लोग मिलकर वह भी खा जाते हैं । शोषण के संदर्भ में यह कहानी मुंशी प्रेमचंद की याद कराती है ।

'किराये का काम' नामक कहानी में भी सामाजिक शोषण को केन्द्र में रखा है । धर्म के नाम पर शोषण तथा गलत तरीके से पैसे पैदा करने का भाव उसमें चित्रित किया गया है । धर्म के ठेकेदारों द्वारा जिन लोगों का शोषण होता है वे लोग अन्धविश्वासी होते हैं । इस कहानी में सेठ और पुजारी द्वारा शोषण करना दिखाया गया है । अपने गोदाम को सेठ जी गाँठो से भरते है सट्टे लगा-लगा कर । अधिक से अधिक मुनाफा कमाने के उद्देश्य से वह अनुष्ठान करवाना चाहता है । यज्ञ करवाने के लिए रोज सवा रूपया के हिसाब से बात करता है । सेठ का नौकर पुजारी को कहता है- ''पुजारी जी सीधा ज्यादा लेते हो-बोलो, साले हम अपने लिए लेते है- जितना भगवान के लिए चाहिए उतना ही लेंगे, कम कैसे ले ? शास्त्रों में लिखा सेर भर घीः तो हम पाव भर लेकर क्या नरक में पड़ें ।''(८) अपनी कमाई का आधा हिस्सा देने को तैयार हो जाता है तो पुजारी जी मान जाते हैं । पुजारी धर्म का भय दिखा कर शोषण करता है । यहाँ पर दोनों ही शोषक है और यादव जी ने दोनों को एक दूसरे के सामने खड़ा कर दिया है ।

'टूटना' कहानी में दो वर्गों के बीच की जीवन शैली को दिखाया गया है । आपसी सामंजस्य या तालमेल करना कितना दुष्कर कार्य होता है । पात्रों को माध्यम से यह बताने की कोशिश की है ।

उच्चवर्गीय परिवार की 'लीना' प्रेमवश मध्यमवर्गीय परिवार के किशोर नामक युवक से कोर्ट-मैरिज कर लेती है, जबकि उसके पिता ने इस विवाह के लिए अपनी सहमति नहीं दी । लीना अमीरी-गरीबी, ऊँच-नीच तथा सामाजिक-समीकरणों की परवाह न करते हुए, साहसिक कदम उठा कर विवाह कर लेती है, परन्तु दोनों के मध्य जो वर्गीय अन्तर है उसको मिटा नहीं पाती । स्वाभाविक है कि मध्यमवर्ग में जीवन-यापन करने वाले किशोर के व्यवहार से वह परेशान हो जाती है । दोनों की ही जीवन शैली में जमीन-आसमान का अन्तर है । फलस्वरूप वह किशोर की हीनता की भावना को बर्दाश्त करने में स्वयं को असमर्थ पाती है और न ही किशोर उच्चवर्गीय लीना का आभिजात्य आचरण स्वीकार कर पाता है । दोनों के बीच खाई बढ़ती जाती है । लीना कहती है- ''न तुम अंधे हो न बहरे । तुम सिर्फ इम्फीरियल्टी काम्प्लैक्स के मारे हुए हो । इसलिये तुम्हें मेरी हर बात वह नहीं लगती जो होती है । उसके पीछे और-और बातें दिखती हैं । मैं समझती थी कि मैनर्स, बातचीत, उठने-बैठने के तौर-तरीके और व्यवहार ऐसी चीजे हैं, जिन्हें बहुत जल्दी बदला जा सकता है, सीखा और भुलाया जा सकता है । लेकिन इस काम्प्लैक्स का तो कोई इलाज ही नहीं...''(९) किशोर मध्यवर्ग से ऊपर तो उठता है किन्तु वह न तो पूर्णतया उच्चवर्ग का बन पाता है और न ही मध्य-वर्ग का । इस अतृप्त मानसिकता के फलस्वरूप वह टूटने को विवश हो जाता है ।

'कुत्ते' कहानी के माध्यम से लेखक ने ताकत के जोर पर शासन में बैठे उच्च पदस्थ पर विराजमान नौकरशाह का आतंक और शोषण को दर्शाया है । साथ ही साथ यह दिखाने का प्रयास भी किया है कि मनुष्य कैसे अपने मनुष्यत्त से दूर होता जा रहा है । उसकी संवेदनाओं और भावनाएँ बिल्कुल मृतप्राय होती जा रही है ।

इस कहानी में एक दरोगा गरीब दूधवाले को पैसों के लिए जानवरों की तरह मारता है । भीड स्तब्ध होकर सिर्फ तमाशाई बन कर देख रही है । इतनी भीड़ में किसी एक आदमी का भी साहस नहीं हुआ कि वह कुछ विरोध करते हुए दरोगा को कुछ कहे, किन्तु शहरी जीवन में मानव-मूल्यों का कोई स्थान ही नहीं रह गया सिर्फ मूल्यों का दिन-प्रतिदिन क्षरण ही हो रहा है । उस दूधवाले का सारा मुँह खून से सना हुआ था, यह कहना मुश्किल था कि खून कहाँ से निकल रहा था । वह ऊपर मुंडी कर के कह रहा था- ''आप लोग सब देखते हो, मैंने क्या किया है । मैं यहीं मर जाऊँगा आज, ये बड़े आदमी है । उसका सारा मुँह खून से सना था, इसलिए यह पता लगाना बड़ा मुश्किल था कि खून उसके नाक, आँख-मुँह, कहां से निकल रहा है । उसके गंदे कपड़े स्थान-स्थान से फट भी गए थे ।''(१०) इस कहानी में कुत्ते के माध्यम से यहाँ इन्सान का खून पीने वाले शोषक की नियति को रूपांकित किया है ।

'खेल खिलौने' कहानी में यादव जी ने मानवीय संवेदना के स्तर पर नारी की अस्मिता को बनाए रखने के संघर्ष को दिखाया है । इसमें कहानी की नायिका 'नलिनी' है । नलिनी के माध्यम से लेखक ने दिखाया है कि समाज किस प्रकार नारी को खिलौना समझ कर खेलता है, तत्पश्चात् तोड़ देता है । इसके फलस्वरूप नारी का धैर्य डगमगाने लगता है । पराधीनता के लिए विवश की गई मुक्तिकामी नलिनी को स्पष्ट और स्वस्थ्य दिशा नहीं मिल पाती । उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह उसकी संघर्षशील दृष्टि का कारण बनता है । जीवन की वास्तविकता निराशाजनक है । दमघोटू वातावरण के विरुद्ध असंतोष और विरोध स्पष्ट रूप से प्रकट होता है । नायिका नलिनी झुकना नहीं चाहती, संघर्ष के लिए छटपटा रही है, टूटने के अंतिम पलों में उसका कथन है- ''अपने ही कंधों पर चढ़ाकर इतना ऊँचा उठा दिया था कि आज जब वे लोग मुझे फिर उसी कीचड़ में घसीट रहे है तो टूट जाना चाहती हूँ । पर नीचे नहीं आ पाती... अब बताइये मैं क्या करूँ ? कैसे मर जाऊँ... केवल विवाह करके इन चार दिवारियों में सड़ जाने के लिये शायद मैं जन्मी थी, मुझे कुछ करना था ।''(११)

'सम्बन्ध' कहानी में पुलिस और डाकू के षड़यन्त्र पर प्रकाश डाला है । इस कहानी में डाकू और पुलिस के षड़यन्त्र से डाकू पैसो की माँग में इतने अंधे हो जाते है कि पिता को सताते हुए पैसों की माँग करते है । पिता पुलिस पर विश्वास करते हुए उन्हें साथ लाता है तो यह क्रूर डाकू बेटे की हत्या कर देते है ।

'मेहमान' कहानी में मध्यमवर्गीय परिवार की त्रासदी के विभिन्न पहलुओं को उभारा गया है । इसमें एक अल्पवेतन भोगी क्लर्क, जो हीनता का शिकार है । उसकी मनःस्थिति का चित्रण किया गया है । जब मध्यमवर्गीय समाज अपनी परिस्थिति और हैसियत का ध्यान न रखते हुये उच्चवर्गीय मेहमान का स्वागत उसके हिसाब से करना चाहता है । वह अपने आप को दूसरे की तुलना में कम नहीं आँकना चाहता । फलस्वरूप परेशानियाँ उसके सामने आकर खड़ी हो जाती है और वह स्वयं को विषम स्थितियों में जकड़ा महसूस करता है ।

'पुराने नाले पर नया फ्लैट' कहानी में स्त्री-पुरुष के संबन्धों पर प्रकाश डाला गया है । सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्रिया व्यवहार में स्त्री मैत्री कर सकती है, उस मैत्री को जो स्त्री पुरुष के मध्य होती है उसे अच्छी नजर से नहीं देखा जाता । पत्नी, अपने पति के पुरुष मित्रों को तो सहज रूप में स्वीकार कर लेती है परंतु जब उसकी महिला मित्रों की बात आती है तो कभी-कभी स्थितियाँ इतनी विस्फोटक हो जाती है कि उसके कारण कई परिवार विघटन के द्वार तक पहुँच जाते है । पत्नी, पति की महिला मित्रों को स्वीकार नहीं कर पाती, उनके प्रति हमेशा शंकाशील रहती है । इस कहानी में पति कहता है कि-''देखो बीरू, तुम समझदार हो, पढ़ी-लिखी हो । थोड़ी उदार बन कर देखने की कोशिश नहीं कर सकती । मेरे और मित्रों की तरह दीप्ति को भी एक नहीं मान सकती ।''(१२) कभी-कभी छोटी दिखने वाली बातें भी परिवार के लिए कितनी विघटनकारी होती है । इस कहानी से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । सम्पूर्ण कहानी में एक शंका और तनाव का वातावरण बराबर दिखाई देता है । आधुनिकता

के बावजूद भी स्त्री और पुरुष की दोस्ती को अधिकांश ही गलत नजरों से देखा जाता है यह संबन्ध असुरक्षित माना गया है ।

'पहली कविता' कहानी का मुख्य पात्र प्रमोद मेघावी और प्रतिभाशाली विद्यार्थी है । समाज में वह एक उभरते कवि के रूप में अपनी पहचान बना चुका है । विद्यार्थी काल से ही उसे कवि सम्मेलनों में आमंत्रित किया जाने लगा । प्रमोद के पिता अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह करते हुए उसका विवाह कर देते है । तत्पश्चात् गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारी का निर्वाह करने के लिये आर्थिक मुद्दे पर पैसों के लिए आपस में कहा-सुनी के फलस्वरूप तनाव रहने लगा । प्रमोद के पिता कहते है- ''बेटाजी यह कविता और शायरी का नशा छोड़ो-यह खाना नहीं देंगी । उठो और नौकरी का डौल करो । मेरे पास नहीं है जिंदगी भर खिलाने को, साफ सुन लो-बहू और बेटे को लो और भाड़ में जा पड़ो । उन्होंने झपटकर हाथ में कविता का कागज लेकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया ।''(१३) यही तो त्रासदी है उन प्रतिभावान युवाओं की । वे ऐसे माहौल में कुंठित हो जाते हैं अन्ततः उनकी प्रतिभा को अवसर नहीं मिलता और वह बीच में ही दम तोड़ देती है । 'नास्तिक' कहानी धर्म के नाम पर शोषण को प्रकट करने वाली कहानी है । धर्म के नाम पर पुजारी भोली-भाली जनता को किस प्रकार फँसा कर अपना घर भरते है इसका चित्रण किया गया है । जो लोग गंगा जी के तट पर पूजा करने आते हैं तो उनसे धर्म के नाम पर बैठने की जगह का किराया लेते रहते हैं ।

'आत्मा की आवाज' कहानी में रिश्वत के माध्यम से शोषण दिखाया है, रिश्वत से किस प्रकार से गलत कार्य को सही सिद्ध किया जाता है उसका चित्रण किया गया है । शंभूनाथ इस कहानी में मिलिटरी ऑडिटर है । एक दिन उसे पता चलता है कि आहूजा के हिसाब में पाँच हजार टन आटे की गड़बड़ है । वह आहूजा को बुलाता है और इस गड़बड़ी के सम्बन्ध में जानकारी माँगता है । आहूजा घबड़ा जाता है और गिड़गिड़ाने लगता है । आहूजा इसके लिए

रिश्वत देने को तैयार हो जाता है । पहले तो शंभूनाथ लेने से मना कर देता है फिर गायत्री मंत्र जपता है । यह उनकी आत्मा की आवाज है, कह कर रिश्वत ले लेता है ।

शोषण हमारे सामने अनेक रूपों में भेष बदल-बदल कर आता है । कभी सत्ता द्वारा शोषण, कभी धर्म के नाम पर, कभी मजबूरी और कमजोरी के कारण शोषण होता आया है । सदियों से ऐसा ही चलता चला आ रहा है ।

'विधवा विवाह' नामक कहानी में इसके दुष्परिणामों पर प्रकाश डाला है । विधवा विवाह करने पर समाज तो उसे स्वीकार नहीं करता अपितु घर वाले भी उसे अपनाने से इन्कार कर उसकी सहायता नहीं करते । इसमें उमाबाबू के साथ, समाज के द्वारा अछूत जैसा व्यवहार किया जाता है, क्योंकि उन्होंने एक विधवा औरत से विवाह किया । उमा बाबू की बीमारी के कारण नौकरी छूट जाती है । इस कारण उनकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त खराब हो जाती है । एक समय ऐसा आता है कि खाने के लिए भोजन तथा पहनने के लिए कपड़े तक नहीं उपलब्ध हो पाते । हमारे समाज में एक ओर विधवा के उत्थान के लिए अनेकानेक प्रयास किए जा रहे तथा दूसरी और कुछ लोग तथा समुदाय धर्म का सहारा लेकर इसके विरोध में पूरी ताकत से लगे है । समाज इसको स्वीकार करने में हिचकिचाहट महसूस करता है ।

देखा जाए तो उमा बाबू ने समाज के सामने विधवा से विवाह कर एक आदर्श स्थापित किया, एक विधवा का जीवन सुधारने का साहस किया । किन्तु समाज के लोगों को यह पसन्द नहीं आया ।

'ढ़ोल' कहानी मध्यमवर्गीय समाज की त्रासदी की अभिव्यक्ति है । कहानी का नायक अत्यंत ही दीन हीन श्रेणी से आता है । सामाजिक प्राणी होने के नाते डर, भय, दया, उपेक्षा और तिरस्कार कितना सहज है । पर उसे न दया स्वीकार्य है और न ही अन्य भावनाएँ । अपनी कमजोरियों को छिपाने के लिए मध्यमवर्गीय व्यक्ति नाना प्रकार के कवच पहन, अपने आप को

भारी-भरकम दिखलाना चाहता है, हकीकत में वह कवच (ढ़ोल) के भीतर सिसकता रहता है । ढ़ोल प्रतीकात्मक है । 'ढ़ोल में पोल' के मुहावरे को बड़े ही सशक्त रूप से कहानीकार ने अपनी कहानी में दर्शाया है ।

'मेरा मन तुम्हारा है' कहानी में शादी से पूर्व प्रेमिका के किए गए वादे, खाई हुई कसमे तथा प्रेमी-प्रेमिका के संबन्ध विवाह होने के पश्चात कैसे इनका स्वरूप बदल जाता है । इसका चित्रण किया है । बिना जान पहचान के व्यक्ति के साथ शादी होने के पश्चात भारतीय युवती पति को ही अपना सर्वस्व मान कर उससे प्रेम भी करने लगती है । अपना तन-मन सब कुछ उस पर न्यौछावर कर देती है । प्रेमी के प्रति उपेक्षा दिखाती है क्योंकि वह अधिक व्यावहारिक होती है । इस वजह से वह अतीत में नहीं अपने वर्तमान पर यकीन रखती है । फलस्वरूप अपने जीवन को सफलता के साथ व्यतीत करती है । विवाह के पूर्व अपने प्रेमी सुधाकर से आत्मीयता के साथ लरजती हुई लीला कहती है- ''तुम ऐसे परायेपन की बातें क्यों करते हो ? मेरा तन-मन सभी तो तुम्हारा है !... भगवान न करें यदि मेरा तन किसी दूसरे का हो जाए तो मन हमेशा-हमेशा के लिए तुम्हारा ।''(१४) कुछ समय पश्चात सुधाकर महसूस करता है कि विवाह के बाद भी उसके प्रति लीला में लगाव है । लेकिन कहानी का अंत मोहभंग से होता है ।

'किनारे से किनारे तक' कहानी में मानिक नामक पात्र दक्षिणेश्वर से बैल्लूर तक की नावयात्रा के दौरान पत्नी की पवित्रता के प्रति आशंकित और संदेहशील बना रहता है । मानिक के पुत्र की शक्ल एक ऐसे व्यक्ति से मिलती है । जो उसकी पत्नी के निकट रहा है इसी सूत्र के सहारे वह पत्नी के प्रति विश्वास का भाव खो देता है । यह कहानी नर-नारी के सम्बन्धों में उत्पन्न हुए संशय, संदेह और तनाव का साक्षात्कार कराती है ।

'हनीमून' कहानी में यौन-कुण्ठा, नारी को किस तरह त्रासित करती है, इसका चित्रण प्रिन्सिपल डॉ. सुधा अरोड़ा के माध्यम से करने का प्रयास किया है । डॉ. सुधा अविवाहित है

और हमारे समाज में नारी का अविवाहित रह जाना भी एक त्रासद पहलू है । 'सेक्स' हमारे जीवन का एक आवश्यक हिस्सा है । कहानी में डॉ. सुधा अरोड़ा जैसी अविवाहित नारियों की टीस, वेदना और यौन कुण्ठा का मार्मिक चित्रण हुआ है ।

'प्रतीक्षा' कहानी का केन्द्र बिन्दु सेक्स ही है । यह कहानी सेक्स के इर्द-गिर्द घूमने वाली एक संवेदनापरक कहानी है । सामाजिक मान्यताओं के बन्धनों के कारण काम-पूर्ति न होने पर व्यक्ति अवैध संबंधों को अपना लेता है । इस के सभी पात्र पारम्परिक मूल्यों को तिलांजलि देकर स्वछंद मूल्यों की प्रतीक्षा में रत है । गीता के दोहरेपन को, यौन कुण्ठा को नन्दा के माध्यम रचनाकार ने उद्‌घाटित किया है ।

'अंधा शिल्पी और आँखोवाली राजकुमारी'- किशोर मन की भावुकता से आख्यायित यह कहानी नर-नारी संबंधों के शाश्वत सेतु की खोज करती है । आँखों वाली राजकुमारी पर अंधे शिल्पी का प्रभाव अंकित करके रचनाकार कहना चाहता है कि ज्ञान व्यर्थ है । शरीर-भूगोल और भावात्मक संसार ही केवल सत्य है और इसके लिए नेत्रों की आवश्यकता नहीं ।

'नीराजना' कहानी में आरोपित सम्बन्धों के अस्वीकार और परिवर्तित परिप्रेक्ष्य में नए मूल्यों के स्वीकार होने का चित्रण किया गया है । परम्परागत विवाह प्रथा में अनेकानेक बुराईयाँ आ गई । दहेज ने विकराल रूप धारण कर लिया । अन्तर्जातीय विवाह ही इन बुराइयों को दूर करने का उपाय है । इस स्थिति की शिकार नीराजना होती है ।

'साइकिल' कहानी मध्यमवर्गीय नारी के शोषण को चित्रित करती है । आज के भौतिक युग में अर्थ की प्रधानता इतनी अधिक हो गई है कि सारी नैतिकता उसके सामने व्यर्थ है । रश्मि अपने पति के मित्र थड़ानी को नापसंद करती है । परन्तु परिस्थितिवश रश्मि को मजबूर होना पड़ता है । आधुनिक युग में भी स्त्री को पुरुष के दबाव में रहना पड़ता है । अन्तर इतना है कि आज वह गाड़ी का पिछला पहिया नहीं, साइकिल का अगला पहिया है ।

'आत्मा की आवाज' कहानी में लेखक ने मुख्य पात्र पंडितजी के आत्म प्रवंचक रूप की प्रस्तुति आत्म मूल्यांकन पद्धति से की है । बदलते जीवन-मूल्यों में आध्यात्मिक अनुष्ठानों और श्रद्धेय पंडितों के महत्व को झुठला दिया है । मात्र पाखण्ड और आडम्बर ही शेष रह गया है जिससे जनता भ्रमित और शोषित होती है । रचनाकार धर्म के नाम पर होने वाली कर्मकाण्डी व्यवस्था का प्रबल विरोधी है । इस कहानी में पंडित जी बराबर आत्मा की दुहाई देते रहते हैं । लेकिन जरूरत के मुताबिक फायदेमंद, स्वार्थपरक, और अनैतिकता को बेहिचक स्वीकार करते है ।

'प्रेत बोलते है' कहानी, कहानीकार तथा पात्र समर की ओर से कही गई है । लेखक, भूमिका बनाता है समर, प्रभा की मौत की रनिंग कमेन्ट्री करते हुए कहानी की थीम को प्रस्तुत करता है । व्यक्ति के स्वयं के और समाज के आंतरिक और बाह्य बंधन उसको असहाय और विवश बनाते है । जब कि मृत प्रेत संघर्ष के लिए चिंघाड़ते है । क्योंकि ये अपनी परिस्थितियों से मुक्त है । प्रेत जीते-जागते व्यक्ति से अधिक जीवंत और धड़कन युक्त है । इस समाज में आर्थिक-सामाजिक लड़ाई लड़ते हुए व्यक्ति जीवित ही मुर्दा बन जाता है । 'परी नहीं मरती' कहानी में बड़ा राजकुमार छोटे भाई की हत्या कर देता है और राज्य छीन लेता है, जबकि छोटा भाई अपना विवाह सिर्फ इसलिए नहीं करता कि वह भाई की सेवा कर सके । आपसी प्रेम में दरार न आए । हत्या करने के बाद वह तड़पता रहता है उसे धन-दौलत, राज्य से चैन नहीं मिलता । अतः कहा जा सकता है कि प्रेम की ऊर्जा ही मनुष्य को सुखी और संतुष्ट बनाती है । धन दौलत में सच्चा सुख नहीं है । यह कहानी परी और दो राजकुमारों की कहानी न होकर राजनीतिक कुचक्र में लिप्त नेताओं के कुर्सी-प्रेम को रेखांकित करती है ।

'अपने पार' कहानी स्त्री-पुरुष के अवैध सम्बन्ध से उत्पन्न बच्चे की पापा के नियमित प्यार की आकांक्षा, माँ की नीरस और अपमानित जिंदगी जीने की लाचारी और पिता के प्रतिवर्ष पत्नी बदलने की ऐय्याशी का चित्रण ही यह कहानी यौन स्वेच्छाचार के कारण बच्चे

की मनःस्थिति का उद्‌घाटन है । अवैध सम्बन्धों से जो बच्चा पैदा होता है वह कहीं का नहीं रहता । वह जिंदगी में हमेशा अकेलापन महसूस करता है । आत्मीयता मर चुकी होती है ।

इस कहानी में भारतीय पारिवारिक व्यवस्था की टूटन तथा पाश्चात्य समाज के प्रभाव का चित्रण किया है ।

संदर्भः

१. हिन्दी साहित्यः युग और प्रवृत्तियाँ- शिवकुमार शर्मा, पृ. ५९३

२. कहानीः स्वरूप और संवेदना- राजेन्द्र यादव, पृ. ७८

३. आज की हिन्दी कहानी- डॉ. धनंजय, पृ. १२५

४. तलवार पंचहजारी (कहानी)ः छोटे-छोटे ताजमहल (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. ६५-६६

५. मेरी प्रिय कहानियाँ- 'भय'- राजेन्द्र यादव, पृ. १२९

६. पुराने नाले पर नया फ्लैट (कहानी)ः किनारे से किनारे तक (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. ७१

७. तलवार पंचहजारी (कहानी)ः छोटे-छोटे ताजमहल (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. ७०

८. जयगंगे- राजेन्द्र यादव, पृ, ५३

९. खेल खिलौने (कहानी)ः खेल खिलौने (संग्रह) राजेन्द्र यादव, पृ. ३८

१०. कुत्ते- राजेन्द्र यादव, पृ. ५३

११. पुराने नाले पर नया फ्लैट (कहानी), किनारे से किनारे तक (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. ८१

१२. पहली कविता (कहानी): छोटे-छोटे ताजमहल (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. १०२

१३. किनारे से किनारे तक (कहानी): किनारे से किनारे तक (संग्रह)
राजेन्द्र यादव, पृ. १०२

१४. राजेन्द्र यादव की श्रेष्ठ कहानियाँ, पृ. ९०

४. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों का विश्लेषण

उपन्यास किसी भी भाषा के साहित्य में सबसे अधिक लोकप्रिय विधा मानी गई है । सर्जनात्मक साहित्य की सर्वाधिक गतिशील एवं नवीन विधा उपन्यास है । आधुनिक युग में जिसका विकास सर्वाधिक हुआ । जीवन के अनेकानेक पहलुओं को एक ही उपन्यास में संजोया जा सकता है । जीवन का जितना गहन चित्रण इस विधा में किया जा सकता है, उतना अन्य विधा में नहीं । इसका फलक बहुत ही विस्तार लिये हुए है ।

समाज की यथार्थ स्थिति से अवगत कराता है उपन्यास । समाज में आई समस्याओं के निराकरण के लिए भी उपन्यास एक सशक्त माध्यम है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार- ''वर्तमान जगत में उपन्यासों में बड़ी शक्ति है । समाज जो रूप पकड़ रहा है, उसके भिन्न-भिन्न वर्गो में जो परिस्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं, उपन्यास उनका विस्तृत प्रत्यक्षीकरण ही नहीं करते, आवश्यकतानुसार उनके ठीक विन्यास, सुधार अथवा निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न कर सकते है । लोक या किसी जन समुदाय के बीच काल की रीति के अनुसार जो गूढ़ और चिन्त्य परिस्थितियाँ खड़ी रहती है उनको गोचर रूप में सामने लाना और कभी-कभी विस्तार का मार्ग भी प्रत्यक्ष करना उपन्यास का काम है ।''(१)

साहित्य मनुष्य की चेतना की अभिव्यक्ति है । तथा उपन्यास जीवन की यर्थाथ परक स्थितियों का चित्रण है जो प्रेरक और हृदयस्पर्शी होता है । साहित्य-विशेष की परख और पहचान का वह केन्द्र बिन्दु है । उपन्यास, मानव जीवन के समान्तर चलकर उसकी गति बढ़ाने की पूरी कोशिश में लगा रहता है । यह जैसी समस्या पकड़ता है उसी के सदृश अपना रूप धारण करता है ।

राजेन्द्र यादव का उपन्यास साहित्य, भारत की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों की उपज है । इन परिस्थितियों ने राजेन्द्र यादव का अनुभूति-पक्ष

मजबूत किया । इन्हीं परिस्थितियों में ही उनके व्यक्तित्व का विकास हुआ । यादव जी के पास अनुभूतियों का पर्याप्त खजाना था साथ ही साथ अभिव्यक्ति की अदम्य इच्छा । फलस्वरूप उनका साहित्य-सर्जन नए-नए कीर्तिमानों को स्थापित करता गया ।

राजेन्द्र जी के सभी उपन्यासों में मानव-जीवन की घुटन, अकेलेपन से ग्रसित व्यक्ति, संत्रास, सम्बन्धों में दरार, टूटता हुआ दाम्पत्य जीवन, प्रेम त्रिकोण, सामाजिक शोषण आदि अनेक विशेषताओं का चित्रण मिलता है ।

अनुभूति की प्रामाणिकता के लिए सामाजिकता का तत्व अनिवार्य है । समाज निरपेक्ष व्यक्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती है । दो संबन्धित व्यक्ति मिलकर समाज की इकाई बनते है । साहित्यकार अपनी कृतियों के माध्यम से अपनी निजी अनुभूतियों को ही व्यक्त करता है । साहित्य के प्रति प्रतिबद्धता ही यादव जी का उसूल है ।

राजेन्द्र यादव जी ने निम्न उपन्यासों का सृजन किया ।

१. सारा आकाश

२. उखड़े हुए लोग

३. शह और मात

४. कुलटा

५. अनदेखे अनजाने पुल

६. मंतबिद्ध

७. एक इंच मुस्कान

सारा आकाश रचनाकार का प्रथम उपन्यास है । इसका शीर्षक दिनकर जी की निम्न पंक्तियों से लिया गया है ।

सेनानी करो प्रयाण अभय, भावी इतिहास तुम्हारा है ।
ये नखत अमा के बुझते है, सारा आकाश तुम्हारा है ।

इस उपन्यास में युवा पीढ़ी की भटकन है तो ऊँची उड़ान के लिए सारा आकाश अपना होने का बोध भी है । युवा पीढ़ी के पास सूने आकाश का ही बोध है यह सत्य है और निराशाजनक भी । एक प्रेरणा भी है जिससे वह अपने को नैराश्य की स्थिति से निकाल कर मंजिल को पहचाने और अपना रास्ता स्वयं तय करे । अफसोस इनके पास न तो कोई दिशा है और न ही कोई मंजिल । इसी भटकाव में उपन्यास का नायक समर आत्महत्या करने की सोचता है ।

इस उपन्यास को दो भागों में विभक्त किया गया है । पहला भाग 'साँझ' है, जो अमा की सांझ है, जिसकी दसों दिशाएँ 'बिना उत्तरवाली' है । उपन्यास का उत्तरार्द्ध 'सुबह' है । इसमें 'बिना उत्तरवाली' स्थिति तो नहीं रही, किन्तु दसों दिशाएँ 'प्रश्न पीड़ित' बनी हुई है ।

सारा आकाश का समर अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाना चाहता है । व्यक्तित्व निर्माण में पुरानी मर्यादाओं और मूल्यों को बाधक मानता है, वह विद्रोही भी बन जाता है परन्तु एकदम से झटक भी नहीं पाता । इस उपन्यास में कटुता, टूटन और विघटन का चित्रण किया गया है । रचनाकार के विचारों और मान्यताओं में पारम्परिक मूल्य विरोध है और व्यक्ति-स्वातंत्र्य की गूँज । पारिवारिक आदर्श, एकता और त्याग के ध्वंसावशेष यहाँ दिखाई देते है ।

संयुक्त परिवार की हिमायत में प्रमुखता से भारतीय संस्कृति की दुहाई दी जाती है और देने वाले लोग अतीत में जीते है । जिसे भारतीय संस्कृति कहा जाता है वह शिरीष को अतीत में विचरण करने वाले भूतों की सभ्यता और संस्कृति लगती है । आदमी को हमेशा विकास-परक होना चाहिए न कि विकासरोधी । रूढ़िवादिता को यदि एक युवक अपनाता है तो उसका बौद्धिक विकास अवरूद्ध हो जायेगा । नए ज्ञान-विज्ञान से परिचित होना आज के बुद्धिजीवी

युवक का कर्तव्य है । व्यक्तित्व विकास और महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है । शिरीष संयुक्त परिवार के विघटन के लिए आश्वस्त है, वह विघटन को सकारात्मक उपलब्धि मानता है न कि नकारात्मक । उसका अनुभव कहता है कि परिवार के ताने-बाने में व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पा रहा है, उनमें दरारें आती जा रही है । सारा समय पारिवारिक समस्याओं को हल करने में ही निकल जाता है । वह समर की सांस्कारिक मान्यताओं पर तार्किकता से आघात करता है- ''संयुक्त परिवार का शाब्दिक अर्थ चाहे जितना महान हो, उसका सबसे बड़ा नुकसान यह होता है कि परिवार का कोई भी सदस्य अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर पाता । लड़ाई, झगड़ा, खींचतान, बदला, ग्लानि सब मिलाकर वातावरण ऐसा विषैला और दमघोटू बना रहता है कि आप साँस न ले सके ।''(२) मुखिया के आस-पास ही घर के प्रत्येक सदस्य का भविष्य घूमता है, जहाँ से वह चाह कर भी नहीं निकल पाता । व्यक्ति की निजी स्वातन्त्र्य चेतना, स्वप्न, अपनी अस्मिता की पहचान, स्वतन्त्र विकास और महत्वाकांक्षा जैसे कारक ही पारिवारिक विघटन के माध्यम होते हैं ।

व्यक्ति के जीवन के विकास और बेहतर भविष्य के लिए तर्कशील विचारक शिरीष इन पारिवारिक मान्यताओं और बंधनों को अभिशाप मानता है । यादव जी संयुक्त परिवार के विघटन को स्वातन्त्र्य जीवन-मूल्यों का तकाजा मानते हैं ।

सारा आकाश उपन्यास में समर के माता-पिता ने अपनी बेटी मुन्नी तथा समर का विवाह कम उम्र में ही करवा दिया था । बेटी के विवाह में बड़ी मुश्किल से दहेज का इन्तजाम कर पाए थे, परन्तु समर के विवाह में अधिक दहेज की आकांक्षा रखते है, जबकि वह स्वयं दहेज की परेशानियों से परिचित थे । दहेज न मिलने के कारण अपनी बहू प्रभा से अप्रसन्न रहते है । माँ भी इन्हीं कारणों से नाराज रहती है । यह विवाह समर की इच्छा के विरुद्ध होता है जबकि वह इसके लिए राजी नहीं होता है क्योंकि उसने एम.ए. करके प्रोफेसर बनने या अच्छी नौकरी पाने के सपने देखे थे । घरवालों के दबाव में उसे विवाह करना पड़ा । फलस्वरूप वह

अपनी पत्नी की उपेक्षा करता है तथा अपनी प्रगति में बाधक समझता है । छोटे भाई अमर की शादी भी छोटी उम्र में उसके पिता करने जा रहे है, वह इसका विरोध करता है किन्तु बाद में मुँह बन्द करके बैठना पड़ता है । इस तरह हम देखते है कि दहेज के दानव से कितनी परेशानी परिवार को उठानी पड़ती है तथा माता-पिता अपनी मन मर्जी से अपने बच्चों का विवाह उनकी इच्छा न होते हुए करा देते हैं, ये अन्याय है, बच्चों के प्रति । समाज में ऐसे अन्यायों से बहुतेरे परिवारों का भविष्य अंधकार में भटक रहा है ।

'सारा आकाश' निम्न मध्यवर्गीय युवक के अस्तित्व के संघर्ष की कहानी है । इस उपन्यास का नायक समर अपनी पत्नी की जिम्मेदारी उठाने में असमर्थ है । स्थितियोंवश वह वास्तविक जीवन से भागना चाहता है । वह नौ साल तक पत्नी से बात नहीं करता है, उसको सहगामिनी नहीं समझता तथा उसको बराबरी का दर्जा देने की बात नहीं सोच पाता क्योंकि उसको अपनी जीवन-साथी चुनने का अधिकार नहीं मिला । नौकरी छूट जाने के पश्चात समर परेशानी से विवश होकर आत्महत्या का विचार करने लगता है ।

शिरीश की भूमिका 'सारा आकाश' में अत्यन्त प्रभावशाली है । उसने पश्चिमी विचारों से आत्मान्वेषण किया है । उसे कूपमंडूकता से नफरत होती है । देखा जाए तो यादव जी शिरीष के माध्यम से सामन्ती मूल्यों का विरोध करते हैं । उनके विचार ज्वालामुखी के सदृश हैं ।

इस उपन्यास में समर के घर में अभाव के कारण राशन न होने के पश्चात भी बच्ची के नामकरण विधि के प्रसंग का आयोजन किया जाता है और रूपयों का अपव्यय किया जाता है । अपने सामाजिक स्तर को बनाए रखने के लिए अनावश्यक शिष्टाचार निभाने की परम्परा में हमारा समाज गहरे रूप से जकड़ा हुआ है ।

इसी उपन्यास में समर को समझाते हुए चन्द जी कह रहे हैं कि–तुम्हारे बाबूजी कह रहे है कि तुम पूजा पाठ, धरम–करम सब छोड़ते जा रहे हो । पढ़ना लिखना क्या इसलिए होता है । सारे लोग धरम–करम छोड़ देगे तो दुनिया कैसी रहेगी । मध्यवर्गीय समाज में बाबू जी और चन्दन जी जैसे पिता बहुतायत में है जो धरम–करम की बातों को अनावश्यक रूप से अपनी संतानों के ऊपर जबरन स्थापित करते है । प्रभा द्वारा गणेश जी को मिट्टी का ढ़ेला समझकर उससे बर्तन माँजना मध्यवर्ग की पढ़ी–लिखी बहू में पूजा–पाठ के प्रति उभरी अनास्था का परिचायक है ।

लेखक ने स्कूलों और कालेजों में 'महानता' का पाठ पढाए जाने की व्यर्थता भी शिरीष के माध्यम से रेखांकित की है ।

राजेन्द्र यादव ने 'सारा आकाश' उपन्यास में भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण किया है । यह एक समर की कहानी न होकर समस्त भारतीय जनमानस की दशा है, जो दिशाहीन होकर इधर–उधर भटक रही है । आज अर्थप्रधान हो गया है । इस वजह से मानवीय रिश्तों का कोई मूल्य नहीं रह गया है, मानवीय रिश्ते बिखरने लगे हैं । पिता–पुत्र माँ–बाप आदि तमाम आत्मीय संबन्धों में अर्थ रूपी जहर घुस गया है जिससे मध्यवर्गीय परिवारों के आत्मीय सम्बन्धों के बीच बिखराव आ गया है । समर अंत में प्रभा का समर्पण और प्रेम देख कर एक दूसरे से प्रेम करने लगते है ।

उखड़े हुए लोगः

'उखड़े हुए लोग' कहानी का सूरज भविष्य के प्रति आशा की दृष्टि से देखता है जबकि न तो उसका अतीत ही सुखद रहा है और न ही वर्तमान संतोषदायक । उसका मानना है कि भले ही वर्तमान हमारा न हो किन्तु कल अवश्य ही हमारा होगा । यदि आज के ऊपर देशबन्धु जैसे रूप बदलने वाले व्यक्ति का अधिकार है तो कल, शरद, सूरज और जया जैसे लोगों का

हो सकता है । विषम परिस्थितियों वश वे विघटन के कगार पर खड़े हो जाते है फिर भी नए मूल्यों के पक्षधर होकर वो अपनी सीमाओं से विद्रोह कर मुक्ति के लिये कसमसाते रहते है ।

इस उपन्यास में देशबन्धु का चरित्र आर्थिक रूप से ही नहीं, राजनीतिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण व्यक्ति का है । देशबन्धु की गिनती उन लोगों में आती है जो अपनी कमजोरी के कारण देशभक्ति को भी व्यापार का रूप दे देते हैं । सत्य मिल में गोली चलने पर वे मजदूरों के बीच में साहस के साथ पहुँच जाते हैं और मजदूरों की लाशों के पास कुछ मजदूरों के बीच भी वे अपना धैर्य नहीं खोते । जब गोली के शिकार परमा की कीमत पाँच सौ रूपए आँकी जाती है तो मन विचलित हो जाता है । परमा के बाद पाँच और व्यक्ति गोली का शिकार बन जाते हैं और देशबन्धु कह जाते है- ''सिर्फ पाँच आदमी... ।'' उनकी इस नीचता के विरुद्ध हमारा मन विद्रोह कर उठता है ।

पक्ष के श्रेष्ठ नेता वल्लभभाई पटेल के स्वर्गवास का धक्का भी देशबंधु को नहीं लगता । वे पटेल के स्वर्गवास का समाचार पार्टी के लिए एकत्रित लोगों को इसलिए नहीं देते कि पार्टी की सारी तैयारियाँ व्यर्थ चली जाएगी ।

उपन्यास का पूरा घटनाक्रम सात दिनों का ही है । इसमें शरद और जया का दाम्पत्य-जीवन केवल सात दिनों के भीतर ही अशांत हो जाता है । शरद-जया समाज में स्थित रूढ़ि, परम्पराओं को खोखले आदर्शों से नहीं बल्कि सशक्त रूप से तोड़ देते है और विवाह किए बिना पूँजीपति देशबन्धु के 'स्वदेश महल' में सुखी दाम्पत्य-जीवन का आरम्भ करते है ।

जया टीचर होने के नाते स्वतंत्र विचारों की पैरोकार है । अतः माता-पिता द्वारा तय किये सम्बन्ध को नहीं मानती । वह बुद्धिसम्मत तार्किकता को प्राथमिकता देती है । मौजूदा समाज ने नारियों को कहीं 'देवी' का तो कहीं 'घर की रानी' का दर्जा देकर गुलामी करा ली लेकिन जया नारी की गुलामी को तोड़ना चाहती है ।

''इसका सीधा अर्थ तो यह हुआ न, प्रमुख कार्य करने वाला पुरुष और स्त्री केवल गति बनाने के लिए 'मोबिल आइल' । फर्क क्या रहा, कल वह चरखे का तेल थी, आज मोटर का मोबिल आइल हो गई ।''(३) नारी को समानता का अधिकार मिले इसलिये उसका आत्मनिर्भर होना उचित समझती है ।

शरद और जया दोनों ही मध्यमवर्गीय परिवार से आते हैं । जया की भाँति शरद भी नारी को समानता की दृष्टि से देखता है और पति-पत्नी को एक दूसरे का पूरक मानता है । जया और शरद दोनों ही जातीयता के बन्धनों को तोड़ कर, विवाह की प्रथा को निरर्थक और त्याज्य समझ कर छोड़ देते हैं । उनका यह कदम आवेश में नहीं अपितु गहरे चिन्तन-मनन तथा मित्रता के बाद साहसपूर्ण लिया गया कदम है ।

शरद व्यक्ति की गरिमा को किसी तरह खण्डित नहीं होने देना चाहता, इसलिए वह कहता है कि- ''विवाह सामाजिक धरातल पर एक व्यक्तिगत मसला है, लेकिन आज की सामाजिक रूढ़ि, जर्जर मिटता हुआ रूप, व्यक्ति के अनुकूल ही नहीं, उसके विकास में सबसे बड़ा बाधक भी है । किन्हीं भी कारणों से समाज का यह रूप नहीं बदलता, तब तक व्यक्ति को पूरी स्वतंत्रता है कि इस मसले को भविष्य के समाज की दृष्टि से, आज शुद्ध व्यक्तिगत स्तर पर ही हल करे । आज विवाह एक समझौता है और उसके सिवा कुछ हो ही नहीं सकता ।''(४)

यादव जी ने बेईमानी, पाप और गुनाह को देशबंधु उर्फ 'भैया' के रूप में चित्रित किया है । देशबन्धु के सम्पर्क में आने पर शरद बेहद प्रभावित होता है । देशबंधु की कथनी और करनी में अत्यधिक अंतर है परन्तु वे इस तरह बाँधे रहते है कि वे गाँधी के सच्चे अनुयायी है । हाथी के खाने वाले दाँत और दिखाने वाले दाँत अलग अलग होते है । शरद को प्रभावित करने के लिए कहते है कि- ''और इसी जीवन का, इन्हीं लोगों का दर्द है, जो मुझे निरन्तर मानवता की

सेवा करने की प्रेरणा देता रहा है । आप विश्वास कीजिए शरद बाबू, मैं चाहूँ तब भी इस जीवन को नहीं छोड़ सकता । लोगों की जब ये हालत देखता हूँ तो पुरानी यादें ताजा हो जाती है- आँखों में आँसू आ जाते है । इन विचारों की जिंदगी में क्या रखा है ? मैंने तो खुद देखा है ।''(५) देशबन्धु भ्रष्ट, बेईमान, पापी और अय्याश भी है वह मायादेवी का दाम्पत्य जीवन उजाड़कर उसके साथ अनैतिक सम्बन्ध स्थापित करता है । रूपादर महिला के साथ भी उसके सम्बन्ध रहते है, मायादेवी के पति का हत्यारा भी देशबन्धु ही है । औरत और व्यापार उसके दुर्गुण है । होटल 'डी पेरिस' में वह जिस्म का व्यापार चलाता है । यह सब जान कर शरद उसकी कुटिलता से परिचित होता है । तथा देशबन्धु से उसका मोहभंग हो जाता है ।

शरद एल.एल.बी. पास युवक है । वह जया को जीवन साथी के रूप में स्वीकार कर देशबन्धु के स्वदेश महल में आकर नौकरी करने लगता है । वह शीघ्र ही समझ जाता है कि देशबन्धु उसका शोषण कर रहा है । असहाय होकर वह जया के साथ वहाँ से भाग जाता है । उपन्यासकार ने वैचारिकता को प्रधानता दी है । मिल मालिक और मजदूर का फार्मूलाबद्ध स्थूल रूप भी प्रस्तुत किया है । रचनाकार ने शोषक चरित्र को बेनकाब करने के लिए हरेक दाँव-पेंच, कुटिलता और कूटनीति का यथार्थता से चित्रण किया है ।

इसी संदर्भ में सूरज नामक युवक देशबन्धु के बारे में शरद से कहता है- ''आवाज खरीदी जाती है, कलमें खरीदी जाती है, आत्माएँ खरीदी जा सकती है, दुनियाँ की सारी चीजे खरीदी जा सकती है- लेकिन सब कुछ थोड़े समय के लिए, आप हमेशा के लिए हर आवाज को नहीं खरीद सकते है-हर व्यक्ति की आत्मा कुचली नहीं जा सकती है । आप व्यक्ति की आवाज, कलम और आत्मा खरीद सकते हैं, लेकिन वह व्यक्ति जिस परम्परा और समूह की कड़ी है उसे आप नहीं खरीद सकते- नहीं कुचल सकते ।''(६) यह छटपटाहट केवल सूरज की ही न होकर तमाम भारतीयों की है ।

कथाकार ने मजदूरों के वर्ग संघर्ष की मुख्य कथा के साथ साथ समाज की दुहरी मानसिकता, सेक्स के प्रति दोमुँहा नजरियाँ, राजनीतिज्ञों और पूँजीपतियों द्वारा बुद्धिजीवियों और साहित्यकारों की खरीद, उच्च वर्ग की विलासिता और मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों के अन्तर्विरोध आदि मुद्दों पर विस्तार से विचार किया है ।

शह और मातः

वर्तमान समाज में नारी की हैसियत और उससे सम्बंधित मूल्य-मर्यादाओं की चर्चा 'शह और मात' का प्रमुख पक्ष है । इस उपन्यास में लेखक कथित सदाचार, शील और सच्चारिता को बार-बार चुनौती देता है । शहरी परिवेश इतना जटिल, व्यस्त और कठोर होता है कि मानवीय सम्बन्धों की सहजता और कोमलता वहां बुरी तरह चोटिल होती है । पास-पड़ोस और व्यवहार का कोई मूल्य नहीं है तथा मानवीय संवेदनाएँ खत्म हो जाती है ।

रूढ़िवादी महान नहीं हो सकता, सुजाता, रेखा से तर्क करती है कि संसार के बड़े चिन्तक या कलाकार प्रायः अनुकरणीय या आदर्श नहीं कहे जा सकते । लेकिन वे महान है, बावजूद इसके कि आदर्शों और नैतिक मूल्यों को तोड़ा है ।

यह उपन्यास बम्बई जैसे महानगर की देन है । इसके दोनों प्रमुख पात्र यहाँ आकर बसे है । उदय अपने सपने को साकार करने के लिये यहाँ आया और स्टेशन पर सामान ढोता हुआ, एक उपन्यासकार बनता । उसका दोस्त मुलायम सिंह 'हीरो' बनने की लालसा में जौहरी की दुकान में नौकरी करता है । गुजर-बसर करने के लिए तमाम ठोकरे खाता है । बम्बई में सीधे-साधे व्यक्ति के लिये कोई गुँजाइश नहीं, यहाँ वही व्यक्ति आराम से रह सकता है जो चलता पुर्जा हो । सुजाता से लेखक कहते हुए चल रहे है- ''हम बम्बई के बारे में सुना करते थे, लेकिन यह ऐसा क्रूर शहर है इसका अन्दाजा पहले कभी न था । मोटर साइकिल वाला सड़क चलते मुसाफिर को धक्का देकर या कुचल कर बिना पीछे मुड़े ही फुल स्पीड पर मोटर साइकिल

भगा ले जाये, यह सीन बम्बई में जब दिन दहाड़े देखा तो लगा जैसे मुझे ही गिरा कर कोई चला गया हो । आप गिरिए, मरिए यहाँ किसी को आपकी ओर देखने की फुरसत नहीं है । कोई यहाँ आपके निकट आने की कोशिश नहीं करता । वर्षो साथ रहिए, जैसे एक शिष्टाचार है, जो रोज खींचता चला जाता है ।'' (७) मनुष्य यहाँ एक यान्त्रिक पुर्जा बन कर रह गया है ।

इस उपन्यास की सुजाता और तेज एक-दूसरे से प्रेम करते थे । तेज लंदन जाकर वहीं का हो जाता है और सुजाता के सारे सपने बिखर जाते है । सुजाता एक लेखिका है उसके अन्दर प्राचीनता और आधुनिकता दोनों का ही समन्वय दिखाई देता है । उसकी कुछ ही कहानियों ने उसे प्रसिद्ध कर दिया । सुजाता के शब्दों में- ''लेकिन जब कोई लड़की होने की तरफ ध्यान नहीं देता और रचनाओं के ही बल पर उन्हें उपेक्षा या आलोचना देता है तो मैं दुहरे अपमान से क्यों तड़प उठती हूँ ? यानि चाहती हूँ कि रचना के बल पर जाँचों, मगर यह मत भूलो कि मैं लड़की हूँ । अजब द्वन्द्व है ।''(८) सुजाता के साथ फूल जी का व्यवहार या बुआ की टिप्पणी से जाहिर है कि नारी के प्रति पुरातन धारणाओं में थोड़ा-बहुत हेर-फेर हुआ है, आमूल चूल परिवर्तन की बात अभी दूर है ।

तेज से प्रेम सम्बन्ध खत्म होने के पश्चात वह बैचेन रहती है । इसी दौरान उसका परिचय उदय से होता है और परिचय का रूपांतर प्रेम में होता है । उदय को तटस्थ देखकर वह सोचती है कि यह व्यक्ति तो बड़ा ही डरपोक और कमजोर है । सुजाता सेक्स के प्रति भद्दी-भद्दी बातें सोचती है जो उसके अतृप्त काम का और अशांत मन का परिचायक है । लेखक उदय का कथन है- ''मेरी समझ में यह बात अभी तक नहीं आती कि तुम लोग शरीर को इतना महत्व क्यों देती हो ।... तुमने कभी सोचा है कि पुरुष-पुरुष या स्त्री-स्त्री में जो खुलापन, एक बेझिझक अपनापा बहुत शीघ्र और सहज आ जाता है, वह क्यों ? यहीं तो वजह है न कि वहाँ हर वक्त यह भूत दिमाग पर नहीं रहता कि किससे किसका क्या छू रहा है या किसकी निगाहें

किसके अंग पर है । जहाँ जानबूझ कर या असावधानी से ही एक-दूसरे की उँगली छू जाने पर महीनों की दोस्ती खत्म हो जाए वहाँ आत्मीयता क्या खाक होगी ? पति-पत्नी में आगे एक गहरी मित्रता, एक उन्मुक्त अभिन्नता आ जाती है, इसकी वजह भी तो वह है कि वहाँ एक दूसरे का शरीर हौवा नहीं रह जाता ।''(९) सुजाता उदय का अध्ययन करते-करते यह भूल जाती है कि उदय उसके अध्ययन का विषय है । उसका ध्यान लेखक उदय से हटकर व्यक्ति उदय में केन्द्रित होने लगता है ।

रचना प्रक्रिया की सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूतियों की गहराइयों में उतरने के कारण ही राजेन्द्र यादव, 'शह और मात' जैसा श्रेष्ठ उपन्यास दे पाए हैं ।

कुलटाः

दाम्पत्य जीवन में प्रेम का होना अनिवार्य है । प्रेमाभाव के कारण जो अभाव और क्षोभ होता है उस ताने-बाने को राजेन्द्र यादव जी ने बहुत ही खूबसूरत ढंग से इस उपन्यास में चित्रण किया है ।

इस उपन्यास की नायिका मिसेज तेजपाल बेहद खूबसूरत और आधुनिक विचारों की नारी है । पति मेजर तेजपाल का स्वभाव इससे ठीक विपरीत है । दाम्पत्य जीवन में सच्चा प्रेम, सामंजस्य तथा एक-दूसरे के प्रति समर्पण की भावना का विशेष स्थान है इसके अभाव में दाम्पत्य जीवन रसहीन हो जाता है ।

शादी के आठ साल बाद भी मिसेज तेजपाल को माँ बनने का सुख प्राप्त नहीं हुआ । अकेलापन हावी हुआ । मेजर तेजपाल के अन्दर मानवीय संवेदनाओं और कोमलता का अभाव था । उन्हें अपनी पत्नी का स्वछंद घूमना, गाना गाते रहना, बाल कटवाना, शर्ट-पेन्ट पहनना बिल्कुल पसंद नहीं था, उनके अनुसार ऐसी औरतें बेशर्म होती है । स्वभावगत भिन्नता के कारण मिसेज तेजपाल का दाम्पत्य जीवन नीरस और तनावपूर्ण हो जाता है । एक बार पति दो महीने

के कैम्प के लिए बाहर चले जाते हैं तो मिसेज तेजपाल उनको नपुंसक कह कर एक वायलिनिस्ट के साथ हमेशा के लिये चली जाती है ।

इस उपन्यास में मिसेज तेजपाल और मेजर तेजपाल मुख्य पात्र हैं । आर्थिक और सामाजिक स्थिति अच्छी होने के बावजूद भी उनमें दिनों-दिन दूरियाँ बढ़ती गई । मेजर तेजपाल पत्नी से प्यार तो करते है परन्तु उसके स्वछंद आचरण को पसंद नहीं करते । मिसेज तेजपाल का झुकाव अपने पति की ओर जरा भी नहीं है । स्थिति तब नाजुक हो जाती है जब अतृप्त पत्नी का प्रेम वायलिन-वादक से हो जाता है और वह सारी मर्यादाओं को छोड़कर अपने प्रेमी के पास चली जाती हैं, अपने पति मेजर तेजपाल के ऊपर 'नामर्द' होने का आरोप लगाकर ये स्थिति मेजर के लिए असहनीय हो जाती है ।

इस उपन्यास में यादव जी ने सूक्ष्म से सूक्ष्म कणों को लेकर सम्पूर्ण उपन्यास की रचना की । मिसेज तेजपाल का स्वछंद तौर तरीका मेजर तेजपाल के मिलिटरी के अनुशासित और औपचारिक वातावरण से मेल नहीं खा पाया । रोज एक-जैसा यान्त्रिक तौर-तरीका उसे नापसन्द रहा ।

''नपी-तुली चाल, नपी-तुली हँसी, नपा-तुला मनोरंजन । आप लगातार एक दूसरे के यहाँ चार साल जाइये, वही पहले दिन वाली फार्मेलिटी, वही तकल्लुफ, वही औपचारिकता, लगता है ही नहीं, जैसे आदमी मिल रहे हो । कठपुतलों की जिंदगी... जिनकी हर हरकत पहले से तय हो ।''(१०) इन सब परिस्थितियोंवश वह वायलिन-वादक के पास भाग जाती है ।

मिसेज तेजपाल को आधुनिक ढंग से कसे हुए कपड़े पहनना, कटे हुए बाल, हरदम गाना गुनगुनाना बेहद पसंद है पता नहीं यह उसका तनाव से लड़ने का तरीका था या किसी कमी की पूर्ति । राजेन्द्र यादव के उपन्यास कुलटा में मिसेज तेजपाल के व्यक्तित्व में बेहद आधुनिकता है, उसे अपने आस-पास के औपचारिक नीरस वातावरण से जबरदस्त शिकायत है ।

इस उपन्यास में यादव जी ने मेजर तेजपाल का चित्रण, अकेलेपन की घिनौनी हरकतों को लेकर किया है । जब मिसेज तेजपाल को अपनी यान्त्रिक, नाटकीय और अभावग्रस्त जीवन का खोखलापन सहन नहीं हुआ तो वह अपने पति की अनुपस्थिति में एक वायलिन-वादक के साथ चली गई, जिसको वह प्रेम करती थी । मेजर तेजपाल को इतना सदमा पहुँचा कि वे पागल हो गए । मिसेज तेजपाल ने उन्हें नामर्द होने का आरोप लगाया था, जिसे वे बर्दाश्त नहीं कर पाए । विक्षिप्तावस्था में वे अंधाधुंध गोलियाँ चलाते, कपड़े फाड़ देते, स्त्रियों को देखकर भद्दी गालियाँ देते, गन्दी हरकते करते है । पत्नी का इस तरह प्रेमी के पास जाना उन्हें अपने पुरुषार्थ पर एक दाग लगा । सुलगती यौन समस्या के परिप्रेक्ष्य में यह सवाल उठाया जाना अपेक्षित है ।

कहा जा सकता है कि मिस्टर तेजपाल की मनःस्थिति में चल रहे द्वन्द्व से वे घुटन, अकेलेपन से त्रस्त है । दाम्पत्य-जीवन में प्रेम का अभाव होने पर जो स्थितियाँ और विक्षोभ उत्पन्न होता है उसे राजेन्द्र यादव ने बड़े कलात्मक ढंग से दिखाया है ।

'अनदेखे अनजाने पुल' उपन्यास में मध्यमवर्गीय परिवार की एक युवती निन्नी की कथा है । कालू-कलूटी होने के कारण विवाह न होना इस समस्या को दिखाया गया है । उसके घरवाले इस वजह से काफी चिन्तित रहते है । वह सोचने लगती है कि गृहस्थ जीवन उसके भाग्य में नहीं है । इस उपन्यास का नायक दर्शन एक लड़की से प्यार करता है, उससे चाहकर भी निकाह नहीं कर पाता है । आय कुछ न होने के कारण वह अपने दोस्त से कहता है, जिसका नाम रम्मी है । उससे शादी करके खिलाऊँगा क्या मेरे पास तो कुछ भी नहीं है । कुरूप होने के कारण तथा पारिवारिक स्थिति अच्छी न होने के कारण निन्नी का विवाह नहीं हो पाया । उसका कुंठित मन यह सोचने लगा कि उसकी कुरूपता उसके लिए अभिशाप है, पूर्वजन्म के पापों का परिणाम है । पूजा-पाठ और तपस्या करके शरीर को कष्ट देने लगी । अत्यधिक ठंड में कपड़े न पहनने के कारण उसे निमोनिया हो जाता है । इसी अवस्था में दर्शन उससे मिलने

आता है तो निन्नी उसके सामने मरने की इच्छा प्रकट करती है । दर्शन ने कहा- ''अनुपात सुंदरता नहीं है, अनुपात के पीछे उद्‌भाषित होने वाला प्राण प्रसन्न, उत्साह और आस्था ही सौन्दर्य है ।''(११)

जाते समय दर्शन, निन्नी के ओठों को चूमता है । फलस्वरूप निन्नी के मन का तनाव खत्म हो जाता है । दर्शन का चुम्बन बैजल के चुम्बन से अलग था । बेजल का चुंबन किसी अन्य के प्रति निवेदित था जिसे गलती से निन्नी ने पा लिया । दर्शन के चुम्बन में आत्मीय और अंतरंगता का बोध था ।

यादव जी ने निन्नी के माध्यम से ईश्वर के प्रति आस्था प्रकट की है । दर्शन के विवाह के बाद निन्नी की हताश, थकी, आत्मा ईश्वर चरण में लीन होना चाहती है । हीनताग्रंथी से पीड़ित निन्नी खूब काम करती है तो कभी खूब रोती है । वह सोचती है कि अपने आप में कुछ सुंदर नहीं, सलीका ही व्यक्ति को सुंदर बनाता है- नारी नरक का द्वार है- सारे विकारों की खान है । जिसे जितना भी कष्ट मिले, संसार का उत्थान होगा । कभी प्राप्त दर्शन का चुम्बन उसके जीवन का महत्वपूर्ण सवाल बन जाता है । उसके सहारे वह अपने व्यक्तित्व का विकास करती है । एक जगह दर्शन निन्नी से कहता है कि- ''जब हम नारी-शरीर को माध्यम बनाकर कमनीय सौन्दर्य की अभिव्यक्ति करते हैं, तो कला होती है, जब उसे ही लक्ष्य बना लेते है तो कुंठित वासनावाली बात आती है ।''(१२) इस उपन्यास में निन्नी की हीनता ग्रंथि को चरम सीमा पर दिखाया है । दर्शन से आत्मीयता होने के पश्चात वह आगे पढ़ती है और अच्छी नौकरी पाती है ।

मंत्रबिद्धः

यह उपन्यास कलकत्ता जैसी घनी आबादी वाले शहर का ताना-बाना लेकर लिखा गया उपन्यास है । महानगरों में व्यक्ति को गुजारा करने लायक जगह तो उपलब्ध हो जाती है

परन्तु जब कोई मेहमान आ जाता है तो समस्याएँ खड़ी हो जाती है । इसलिए मोहन और इंदु सोचते है कि ये दोनों मेहमान घर से जल्दी चले जाये । महीने भर का राशन पन्द्रह दिन में ही चुकने लगता है ।

सुरजीत और तारक जब घर छोड़कर, मोहन और इंदु के घर आते हैं तो मेहमानों के आने से महानगरीय परिवेश में जो कठिनाइयाँ सामने आती है लेखक ने उनका बड़ी खूबसूरती के साथ इस उपन्यास में दिखाया है, मोहन दा कहते है- ''कलकत्ता, बम्बई में न तो किसी के पास इतनी जगह है कि एक फ्लैट अपने लिए और एक आपके लिए अलग कर दे, न इतनी आमदनी होती है कि चार आदमियों को महिने-दो महिने खिला सके । दोस्त लोग दो आदमियों के रहने का खर्चा बर्दाश्त कर ले यही बहुत है । उनसे यह उम्मीद भी की जाए कि पचास रुपए निकाल कर दे देंगे, सो मुझे सम्भव नहीं लगता ।''(१३)

इंदु का पति मोहन विवाहोपरान्त पूर्णिमा से प्रेम करने लगता है । वह दूसरी स्त्री से अनैतिक सम्बन्ध नहीं बर्दाश्त कर पाती । फलस्वरूप दाम्पत्य-जीवन तनावपूर्ण हो जाता है ।

इसी उपन्यास में तारकदत्त कालेज में नौकरी करता है दिल्ली शहर में । पत्नी बनारस रहती है, वह पर पुरुष से अनैतिक सम्बन्ध रखती है । उसके तीन बच्चे हैं लेकिन तारक केवल पहली बच्ची को अपनी संतान मानता है । तारक सुरजीत कौर से दूसरी शादी कर कलकत्ता चला जाता है । अभाववश दिल्ली लौट आता है । कुँवारे लड़के-लड़की की ही नहीं, विवाहित युवक और अविवाहित युवती के प्रेम प्रकरण के बहाने लेखक ने जीवन के संघर्ष को संवेदनात्मक स्पर्श के साथ अत्यन्त गहराई से चित्रित किया है । प्यार को बुनियादी ठोस आधार के साथ कानूनी संरक्षण की भी आवश्यकता होती है । लेखक ने दिखाया है कि महानगरों में नारी-पुरुष दोनों को ही स्वछंद वातावरण चाहिए । वे किसी नैतिकता तथा संस्कारों का बंधन नहीं ढ़ोना चाहते ।

''एक इंच मुस्कान''में पति पत्नी के नाजुक रिश्ते में किसी तीसरे व्यक्ति के आने से जो स्थितियाँ उत्पन्न होती है जिससे सम्पूर्ण दाम्पत्य जीवन दुःखदायी हो जाता है इसका चित्रण बड़े ही मर्मस्पर्शी ढंग से किया गया है । इस उपन्यास में रंजना-अमर के दुःखी दाम्पत्य जीवन के मूल में तीसरे व्यक्ति का आगमन है । लेखक होने के नाते अनेक पाठकों के पत्र आते हैं अमर के पास । स्थितियाँ तब दुरूह हो जाती है जब अमला नामक परित्यक्ता स्त्री आत्मीयता से अमर को पत्र लिखती है तथा घर में आकर अमर से एकांत में मिलती है । रंजना का संदेह विश्वास में परिणित हो जाता है । अंत में वह अमर का घर हमेशा के लिए छोड़कर चली जाती है ।

राजेन्द्र यादव और मन्नू भंडारी के सहलेखन में लिखा गया उपन्यास 'एक इंच मुस्कान' में एकल परिवारों का वर्णन किया गया है । टण्डन और मन्दा का परिवार तो सुखी है किन्तु रंजना और अमर का परिवार विघटित । यह कटु सत्य है कि एकल परिवारों के विघटन में मुख्य कारण अधिकांशतः 'तीसरे का प्रवेश' ही होता है । अमर रंजना के पजेसिव रूप को स्वीकार नहीं कर पाता और दोनों अलग-अलग जिंदगी जीने को मजबूर हो जाते है । लेखक ने स्वयँ एक जगह लिखा है- ''वस्तुतः रंजना और अमला अमर के निकट दो सम्पर्क नहीं दो स्वतंत्र मूल्य है और इन मूल्यों की संगति का निरूपण ही अमर का अभ्यंतरिक द्वन्द्व है ।''(१४)

उपन्यास का नायक अमर विवाह को साधन मानता है । उसने रंजना को चाहा, ना, ना करते हुए विवाह किया कि वह अपनी साधना को दुगुनी शक्ति और निष्ठा से चलाए रख सके । मगर रंजना अंजाने ही विवाह को साध्य मान बैठती है, और अमर की पूरक नहीं बन पाती । परम्परागत मान्यताओं, संस्कारों और रूढ़ियों को तोड़कर वयस्क रंजना लम्बे परिचय और मित्रता की प्रगाढ़ता में पके अपने सघन-प्रेम को सामाजिक आधार देती विवाह की जमीन से तोड़ती है तो अप्रत्याशित रूप से कह पाती है कि उनके गुनगुने सम्वाद तो सन्नाटेपन की भयावहता में कही दफन हो गए हैं इस प्रकार उन दोनों के बीच के पारंपरिक सूत्र बिखर गए है ।

संदर्भः

१. आधुनिक युग के वातायन से–अशोक गुप्त, पृ. ३६

२. सारा आकाश– राजेन्द्र यादव, पृ. १८८

३. उखड़े हुए लोग– राजेन्द्र यादव, पृ. २८

४. मंत्रबिद्ध–राजेन्द्र यादव, पृ. ४२

५. उखड़े हुए लोग– राजेन्द्र यादव, पृ. ३७६

६. अनदेखे–अनजाने पुल– राजेन्द्र यादव, पृ. १२६

७. शह और मात– राजेन्द्र यादव, पृ. ६०

८. उखड़े हुए लोग– राजेन्द्र यादव, पृ. ३६

९. रमेश दीक्षित का लेख (साप्ताहिक हिन्दुस्तान) दि. –१६, १९७३ का अंक, पृ.१०

१०. शह और मात–राजेन्द्र यादव, पृ. १४७

११. अनदेखे अनजाने पुल– राजेन्द्र यादव, पृ. १५८

१२. कुलटा–राजेन्द्र यादव, पृ. ६६

१३. कथाकार–राजेन्द्र यादव–सोनवणे, पृ.१०८

१४. प्रेमचंद की विरासत और अन्य निबंध– राजेन्द्र यादव, पृ. १९

५. राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में बदलते मानव मूल्य

जब हम राजेन्द्र यादव के सम्पूर्ण कथा-साहित्य का अध्ययन और मनन करते है तो प्रकट होता है कि मूलतः वे प्रगतिवादी कथाकार है फिर भी उनके समूचे कथा-साहित्य में हमें बदलते मानव-मूल्यों की स्थापना कहीं न कहीं दृष्टिगोचर हो उठती है । उनके साहित्य में यदि विश्वजनीय करुणा, ममता, दया, क्षमा, प्रेम एवं विश्व मैत्री की झलक दिखाई देती है तो इसके विपरीत कठोरता, क्रूरता, क्रोध, चरित्रहीनता, अति आधुनिकता, उदंड़ता, दुश्मनी, जलन, विघटन जैसे बदलते मानव-मूल्यों की अपने कथा-साहित्य में प्रकारान्तर से चर्चा की है, जो उन्हें मानवतावादी कथाकार सिद्ध करता है ।

भारत के भाग्य में समूची मानवता का सौभाग्य विधान जुड़ा हुआ है । उसके भाग्योदय में समूची विश्वमानवता के सौभाग्योदय का संदेश सन्निहित है । भारत का भाग्य इतना महान, उज्जवल एवं उत्कृष्ट है कि इसके प्रकाश में समस्त मानवता, नई ऊँचाई को छू सकती है, बहुत दूर जा सकती है क्योंकि भारत में साहित्य के माध्यम से विकास एवं उत्थान की समस्त संभावनाएँ निहित है । इस देश के साहित्यकारों को समझनी पड़ेगी अपनी राष्ट्रीय विशेषताएँ और गढ़ना होगा अपना राष्ट्रीय चरित्र ।

हमारे यहाँ ज्ञान का ऐसा दिव्य एवं अकूत भंडार भरा पड़ा है, जिसके माध्यम से समूची मानवता को नई दिशा दी जा सकती है, और उसकी समस्त समस्याओं का समाधान दिया जा सकता है, भीषण कठिनाइयों एवं चुनौतियों से उबारा एवं निकाला जा सकता है । महान से महान ज्ञान और बड़ी से बड़ी संपदा जो मनुष्य के पास हो सकती है, जिसकी कल्पना मात्र से रोमांचित हुआ जा सकता है, वह हमें विरासत में मिली है । जिनमें उज्जवल भविष्य की विशाल एवं व्यापक संभावनाएँ निहित है । ज्ञान के अनुसार अकूत भंडार से हम न केवल अपने राष्ट्र

का, बल्कि समूची मानव जाति के आंतरिक एवं बाह्य जीवन, दोनों का पोषण, संरक्षण एवं विकास कर सकते हैं ।

आज साहित्यकार के सम्मुख सत्य, धर्म, नैतिकता, राष्ट्रीयता आदर्श आदि मूल्यों का कोई अर्थ नहीं रह गया है । अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले सांस्कृतिक हलचलों ने भारत में प्रचलित मान्यताओं और व्यवस्थाओं की परम्परा अनुमोदित जड़े ही हिला दी । सामाजिक जीवन की सफलताओं के लिए पारस्परिक सहयोग की भावना, सामुदायिक संगठन, सांस्कृतिक विकास, बौद्धिक विचारणा, व्यवस्था की रक्षा और उसका निर्वाह अनिवार्य अंग बन गए है । मानव-मूल्यों के अवमूल्यन एवं विघटन का ऐसा आरम्भ हुआ, जिसकी समाप्ति के लक्षण दूर-दूर तक नहीं दिखाई दे रहे थे । समाज की परिस्थितियों ने एक नई करवट बदली । पारम्परित मूल्य और जीवन-दर्शन भी स्वाभाविकतः बदल गए । जीवन के उतार-चढाव और परिवेशगत बदलते दायरों ने बहुमुखी अव्यवस्था को पैदा किया । परिणामतः एक व्यक्ति का स्वार्थ दूसरे व्यक्ति के स्वार्थ से टकराने लगा ।

नैतिक मूल्यों का ह्रास और आध्यात्मिकता की अपेक्षा के फलस्वरूप जीवन में निराशा और पलायनवादी नजरिया उत्पन्न होता है । यह परिस्थिति और परिवेश से और मजबूत होता जाता है । द्वितीय विश्वयुद्ध में हुए विभाजन के परिणामस्वरूप राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों ने सम्पूर्ण समाज को झकझोर दिया और परम्परागत आदर्शो, मान्यताओं, जीवन मूल्यों, अनास्थाओं का क्षरण और विघटन हुआ । समाज विभिन्न समूहों और वर्गो में बँट गया तो व्यक्ति चेतना, अर्द्धचेतना, अवचेतना में बिखर गया ।

सन् १९६१ में मोहन राकेश का 'अंधेरे बंद कमरे' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ । जिसमें मध्यमवर्गीय जीवन का चित्रण हुआ है, वह पुराने मूल्यों को तोड़ देता है । ऊषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी में चरमराती हुई पारिवारिक संस्था में विघटन की स्थितियों का चित्रण किया गया है ।

औद्योगीकरण के फलस्वरूप नगरों की संख्या में वृद्धि, सामुदायिक जीवन का ह्रास दिखाई दे रहा था । व्यक्तिवादी आदर्श का विकास हो रहा था । विघटन के इस युग में पारिवारिक विघटन की समस्या जोरों पर थी । वो पारिवारिक मानदंड जिन पर परिवार की नींव टिकी थी अब टूटने लगी है । संयुक्त परिवार सामूहिकता की भावना को प्रबल करता है, व्यक्तिवाद की भावना को पैदा नहीं होने देता ।

व्यक्तिवादी संकुचित दृष्टिकोण के कारण संयुक्त परिवार बिखरने लगे फलस्वरूप सेवा, सहयोग, निष्कर्ष और बलिदान जैसे मानव-मूल्यों का ह्रास हुआ । राजेन्द्र यादव जी की कहानियों में जगह-जगह मानव-मूल्यों का बदलाव होता दिखाई दिया है ।

विवाह संस्था और दाम्पत्य-जीवन का कोई मूल्य नहीं रह गया । विवाह की अनिवार्यता और प्रासंगिकता के प्रति धीरे-धीरे बदलाव दिखाई दे रहा है । राजेन्द्र यादव की कहानियों में पीढ़ी अंतराल, उपेक्षित संतान, नारी का शोषण, तथा नारी की पुरुष से होड़ लेने की प्रवृत्ति, नारी के प्रति अपराध, नारी का संघर्ष, आडम्बर युक्त खोखला जीवन, मध्यमवर्ग की समस्याएँ, विधवा विवाह, सांस्कृतिक मूल्यों का रूपान्तरण, तथा मानवीय मूल्यों के बदलते समीकरण का बहुत ही बारीकी और खूबसूरती से चित्रण किया गया है ।

संस्कृति और मूल्य आपस में एक दूसरे से गुथे हुए है । संस्कृति वह तत्व है जो हमारे जीवन को परिष्कृत, उदार और विवेक संपन्न बनाता है । मानव के जीवन मूल्यों का सीधा सम्बन्ध संस्कृति से होता है । ग्रामीण और नगरीय संस्कृति में जो भिन्नता दिखाई देती है उसका कारण दोनों का विकास दो अलग प्रकार की परिस्थितियों एवं पर्यावरण में होता है । संस्कृति में परिवर्तन वस्तुतः मूल्यों में परिवर्तन को ही प्रकट करता है ।

राजेन्द्र यादव जी की कहानियों में आदमी तनाव की स्थिति में है जिसके मूल में आधुनिकता की चुनौती है । उनकी कहानियों में मूल्यों का बिखराव और विघटन चित्रित किया

गया है । आखरी दशक की कहानी मूल्य-विघटन के भयावह पक्ष का प्रतिबिम्ब करती नजर आती है ।

'तलवार पंचहजारी' कहानी में मूल्य-संघर्ष पुरानी पीढ़ी का ही नहीं, सामंती और आधुनिक मूल्यों का भी है । रायसाहब के लिए कुलमर्यादा बहुत मूल्यवान है । उस परम्परा के अवशेष रायसाहब का, लालू एकदम खारिज कर देता है । तलवार को तोड़कर उस्तरे बनवा लेना पूरी तरह से सामन्ती मूल्य व्यवस्था को अस्वीकार है ।

राजेन्द्र यादव की कहानियाँ मूल्य-विघटन और मूल्यों के क्षरण को दर्शाती है ।

'खुली हुई साँझ' कहानी शहरी-जीवन के उन्मुक्त जीवन के दर्शन को चित्रित करती है । इसमें सम्भ्रान्त महिला एक अपरिचित युवक से कुछ समय के लिए दोस्ती कर लेती है । यह घटना अभिजात्य-समाज में फैलती अय्याशी और अकेलेपन को दर्शाती है । यह स्त्री और पुरुष के मध्य नैतिक मूल्यों का बदलाव दिखाया गया है जाहिर सी बात है कि आधुनिक समाज में मित्रता का सभ्य आवरण में फैशन के रूप में स्वयं के अस्तित्व को खोने की छटपटाहट हर व्यक्ति की त्रासदी है । सांस्कृतिक और बदलते नैतिक मूल्यों का दर्पण है यह कहानी । जो चीजें इज्जत के लिए जानी जाती थी, व्यक्ति के जीवन-मरण से जुड़ी थी, वे सब आधुनिक समाज में सामान्य सी घटना के रूप में सामने आती है, यही वजह है कि औरतें अपने शरीर को दौलत कमाने का माध्यम बना लेती है । कहीं उच्च आकांक्षा के कारण तो कहीं प्राथमिकता के कारण । आधुनिकता की अंधी दौड़ में भारतीय समाज अपने मूल्यों के प्रति कटिबद्द नहीं रहा, वह मूल्यों का क्षरण होते देख रहा है, लेकिन पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण के ललक के पीछे उसे अपने विघटित होते हुए मूल्य कहीं नजर नहीं आ रहे है ।

निम्न मध्यमवर्गीय जिन्दगी का दोहरा शोषण का जीता-जागता दस्तावेज है- 'लंच टाईम' । जिसमें टल्लूमल फर्म देवी सहाय की छह महीने की तनख्वाह हड़प जाती है, रही-सही

कसर न्याय के मंदिर में न्याय के तथा-कथित ठेकेदार मुंशी जी तथा वकील साहब किसी न किसी बहाने उसके सारे रूपए हड़प जाते है, यहाँ तक बीमार बहू के लिए जो फल लेकर वह आया है, वह भी खा लेते है । यहाँ इस कहानी में न्याय तथा दया जैसे मूल्यों की जगह अन्याय और शोषण दिखाया गया है ।

'भय' कहानी के अन्तर्गत गैरेज के मालिक का प्यार के स्थान पर बालकों के श्रम का शोषण दिखाया है । 'स्वतन्त्रता दिवस' कहानी में सेठ धन्नामल के स्वाधीनता युद्ध में किए गये 'उदार सहयोग' पर व्यंग्य करते हुए परोपकार जैसे नैतिक मूल्यों के बदलाव का चित्रण है । परोपकार के नाम पर जालसाजी ।

'जहाँ लक्ष्मी कैद है' का लालची रूपाराम अपनी ही बेटी का अंधविश्वास के कारण शोषण करता है । प्यार और स्नेह के स्थान पर मानवीय मूल्यों का तिलांजलि देता नजर आता है, जिसकी उसकी बेटी अधिकारिणी है । दया और करुणा की जगह क्रूरता का चित्रण इस कहानी में दर्शाया है ।

'मेहमान भगवान होता है' ऐसा हमारे समाज में समझा जाता था । 'दायरा' नामक कहानी में स्वार्थ का चित्रण किया गया है । इसमें अतिथि का दायरा और आतिथ्य कर्ता की औपचारिकता का वर्णन है ।

'कुतिया' नामक कहानी में एक सुंदर लड़की को एक अमीर लाला शादी का लालच देकर उसका आठ नौ साल तक यौन शोषण करता है । फिर निकाल देता है । नारी का शोषण सदियों से होता आया है कभी बेटी के रूप में, कभी पत्नी के रूप में, या माँ के रूप में । रूप अलग है पर शोषण तो नारी का ही है ।

'किराये का काम' नामक कहानी में सेठ और पुजारी दोनों ही शोषण के प्रतीक है । एक धर्म के नाम पर तथा दूसरा सट्टे के माध्यम से ।

शासन और शासक दोनों ही जनता की भलाई के लिए होते हैं लेकिन सत्ता के मद में चूर होकर गरीबों का शोषण करना या अन्याय करना, ये सब यादव जी ने 'कुत्ते' कहानी में दिखाया है । जिसका शोषण हो रहा वह भी चुप और जो देख रहा वह भी चुप । यह प्रवृत्ति मनुष्य को मनुष्यता जैसे नैतिक मूल्यों से दूर कर रही है । आधुनिकता के इस दौर में, स्वतन्त्रता की दुहाई, समान न्याय की दुहाई सिर्फ कागजों पर दिखाई देती है ।

'सम्बन्ध' कहानी में पुलिसिया षड़यन्त्र दिखाया गया है। विश्वास जैसे नैतिक मूल्यों का चित्रण इस कहानी में किया है, विश्वास जैसे मानव-मूल्य का क्षरण इस कहानी की धुरी है ।

'आत्मा की आवाज' कहानी में रिश्वत जैसी कुरीति का चित्रण किया है । ईमानदारी जैसे मानव मूल्य का टूटना इस कहानी के माध्यम से चित्रण किया गया है । इसमें आत्मा की आवाज पर रिश्वत लेने का उल्लेख है, जबकि अपनी जिम्मेदारी या कर्तव्य ईमानदारी से निभाना चाहिए ।

'तनाव' कहानी की मिसेज सिन्हा उस पर चोरी से कुछ खाने का आरोप लगा कर नौकरी से निकाल देती है क्योंकि नौकर नेकीराम को जब वह बुलाती है तो वह जल्दी से नहीं आ पाता है ।

'यथार्थवादी कहानी लेखक' कहानी में एक विधवा औरत से उमा बाबू शादी करते हैं । जाहिर है कि उमा बाबू ने समाज के हित का कार्य किया है, एक विधवा को फिर से सुहागन बना कर इस कठोर दुनिया में सहारा भी दिया लेकिन इस मौजूदा समाज को ये पसन्द क्यों नहीं आया यह उसकी मनःस्थिति को प्रकट करता है । बदलते मानव-मूल्यों का ये जीता-जागता उदाहरण है ।

यादव जी ने 'शहर की यह रात और'... कहानी में कलकत्ता में चल रहे वेश्या जीवन का उल्लेख किया है । बारह-बारह साल की लड़कियाँ भी दरवाजों पर खड़ी होती है तथा लोग लाइन लगा कर खड़े होते है । इस प्रकार खुले आम शहरों में वेश्या व्यवसाय चल रहा है ।

'पिल्ला' नामक कहानी में जाति-प्रथा के आडम्बरों को दर्शाया गया है . गाँव के मंदिर में कोई औरत बच्चा छोड़ जाती है । कोई भी इसे अपनाना नहीं चाहता, क्योंकि वह कौन सी जाति का है ?

राजेन्द्र जी ने लिखा है कि- 'एक मात्र' सत्य माना है । यह समाज सम्बन्ध-सापेक्ष व्यक्तियों से बनता है... व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का सम्बन्ध समाज बनाता है ।''(१) छोटे बच्चों को हम और हमारा समाज ईश्वर का रूप मानते हैं । बच्चा मंदिर के प्रांगण में पड़ा है और यहाँ उसकी जाति पर चर्चा की जा रही है । यह कहाँ की मानवीयता है ? इस कहानी में बदलते मानव मूल्यों का चित्रण स्पष्ट दिखाई देता है ।

'बिरादरी बाहर' कहानी में पारस बाबू की बेटी मालती अपने से नीची जाति वाले लड़के से शादी करती है तथा 'पास-फेल' कहानी के भार्गव बेटी का विवाह उसके प्रेमी से नहीं करने देते क्योंकि वह उनकी जाति का नहीं है । पुत्री अपनी सहेली द्वारा पिता से कहलवाती है कि शादी करेगी तो वीरेन्द्र से नहीं तो नहीं करेगी । प्रो. भार्गव कहते है- ''उनकी क्या है, वो भंगी से शादी कर ले नीच जात, न संस्कार, न अच्छे-बुरे का विचार ।''(२) भार्गव जैसे शिक्षित लोग जाति के संदर्भ में लेक्चर देना ही पसंद करते है जब बात अपने घर तक आती है तो वे बर्दाश्त नहीं करते । यादव जी ने अमानवीय पहलुओं पर नजर रखकर यह संदेश दिया कि-भारतीय समाज में जाति-भेद मानने की आवश्यकता नहीं है, उससे मानव की मूलभूत पहचान मानवीयता ही खंडित होने लगती है ।

'ज्योतिष विद्या' कहानी का मुख्य पात्र 'स्वरूप' अपने अल्प ज्ञान के द्वारा अंधेरे में तीर फैकने जैसा व्यवहार करता है । रचनाकार यहाँ भविष्यवक्ता के थोथे व्यक्तित्व को सामने लाता है । कुछ समय तक ही इस ढ़ोंग से बेवकूफ बनाया जा सकता है । रचनाकार विकृतियों और अन्धविश्वासों को समूल नष्ट करने का यत्न करता है । भविष्य को जानने की इच्छा में वर्तमान को चौपट क्यों किया जाय ? आज के सुख को, कल की चिन्ता में क्यों दाव पर लगाया जाए ? इस तरह का स्पष्ट अभिमत रचनाकार देता है ।

'शहर की रात' और 'फ्रेंच लेदर' जैसी कहानियों में अन्धविश्वास दिखाई देता है ।

'कटी हुई कहानी' में कुलवंत वीरेश्वर से मिलती । वीरेश्वर उसके दृष्टिकोण को समझ जाता है कि ''कुलवंत की उसके साथ मैत्री भी इस अकेलेपन के काटने का साधन ही है, और वह स्वयं एक निमित्त या माध्यम भर है ।''(३) वीरेश्वर के बुलाने पर नीता का आना भी अकेलेपन से ही बचने का उपक्रम है । वीरेश्वर समाज के सामने नीता का परिचय वह 'दोस्त की बहन' के रूप में देता है । नीता को झूठी और नकली जिंदगी असहाय होने लगती है । कहानीकार पश्चिमी सभ्यता को प्रमुखता देता हुआ भारतीय समाज में फ्री सेक्स को सहज मानता है या यह कहना चाहता है कि आधुनिक नारी सड़े हुए नैतिक मूल्यों, संस्कारों और पारम्परिक बन्धनों से ऊँब चुकी है एवं उनके बोझ को उतार फेंकना चाहती है ।

'छोटे-छोटे ताजमहल' के सभी पात्र व्यस्त, कुंठित और त्रस्त है । आधुनिक काल में प्रेम का विकास प्रगाढ़ता में, अकेलेपन में है । प्रेम को स्वीकारने का अर्थ है- अकेलेपन को गले लगाना ।

समाज द्वारा जिसे मान्यता न हो उसे वर्जित, यौन-सम्बन्ध कहते है । जो लोग वर्जनाओं को नहीं मानते उनकी दृष्टि में एक ही सामाजिक सम्बन्ध है- पुरुष और नारी प्राकृतिक रूप से परस्पर एक दूसरे के पूरक है । इसी आशय को कहानीकार ने 'अनुपस्थित सम्बोधन' में दर्शाया है । इसमें माँ, बेटी एक ही पुरुष से सम्बन्ध बनाने में भी नहीं हिचकती । अय्याशी

पुरुष अपनी हवस की खातिर माँ को तो बरबाद करता ही है साथ ही साथ बेटी को भी नहीं छोड़ता । यहाँ सम्बन्धों को खुलेआम स्वीकारा जाता है । खुले रिश्तों का चित्रण अत्यन्त मार्मिकता से किया है । माँ और बेटी के एक ही पुरुष से सम्बन्ध बदलते मानव-मूल्यों का चित्रण करता है ।

इसी तरह 'खूशबू' नामक कहानी में कहानीकार ने बदलते जीवन मूल्यों का चित्रण किया है । इस कहानी का नायक अपनी सौतेली माँ के साथ यौन सम्बन्ध रखता है । आधुनिक युग के समाज में रिश्ते नातों का कोई मूल्य नहीं रह गया है, संस्कार मर चुके हैं । अगर इस तरीके से रिश्ते स्थापित होने लगें तो इसे कौन सी संस्कृति का नाम दिया जायेगा । मनुष्य पशुओं की तरफ जा रहा है । यह उन्नति न होकर, 'मानव मूल्यों' की अवनति है ।

'पुराने नाले पर नया फ्लैट' कहानी में बीरू का पति का मित्रता का सम्बन्ध दीप्ति नाम की महिला से हो जाता है । बीरू के पति का व्यवहार इस कहानी में उसकी असहनशीलता का परिचय देता है । दरअसल बीरू का व्यवहार उसके तथाकथित नारी सुलभ ईर्ष्यालु प्रवृत्ति का द्योतक नहीं है, उसके अपने पति के प्रति अधिकार-सूचक प्रेम तथा असुरक्षा के भय का परिणाम है, जिसे उसका पति समझ नहीं पाता ।

'प्रतिहिंसा' कहानी में एस.चौधरी विवाह के दो साल बाद ही पत्नी प्रभा पर अशिक्षित होने का आरोप लगा कर उसे छोड़ देता है तथा एक एंग्लो-इंडियन लड़की से विवाह कर लेता है । 'अभिमन्यु की आत्महत्या' कहानी में कैलाश मीना को चाहता है । विवाह के पश्चात भी उस सम्बन्ध को बनाए रखता है । इन कहानियों में मानव-मूल्यों के बदलाव का चित्रण किया गया है ।

सामाजिक रीति रिवाजों के अभिशापों में दहेज प्रथा का दानवी-रूप 'लकड़हारा' कहानी में अभिव्यक्त किया है । समस्या वही है बस दृष्टिकोण में अन्तर आया है । इस कहानी

में दहेज के कारण शोभा का विवाह जसवन्त से टूटता है । उम्मीद से वह जसवंत को देखती है, शायद वह कोई एक्शन ले, किन्तु वह पिता की कठपुतली बन रह जाता है, प्रतिक्रिया स्वरूप शोभा नाई के लड़के सुमेरा को रिक्त हुए पीढ़े पर जबरन बिठाती है और शादी करती है ।

शोभा जाति-पाँति को खत्म करना चाहती है । 'टूटन' कहानी की लीना वर्ग की दीवारों को लाँधकर अपने प्रेमी के पास पहुँच जाती है । 'नीरांजना' कहानी में विद्रोहिणी नीरांजना अपनी सगाई की उपेक्षा करके अपने प्रेमी के यहाँ पहुँच जाती है । यह यादव जी की कहानियों में बदलते मानव-मूल्यों का चित्रण है ।

एक कमजोर लड़की की कहानी में सविता-प्रमोद से प्यार करती है लेकिन उसका विवाह लोकेश भारद्वाज से हो जाता है । विवाह पूर्व प्रेम सम्बन्धों में दोनों ही प्रेमी जीवन में सुखी नहीं रह सकते । उसकी अपूर्णता इन्सान को नासूर जैसी टीस देती है, तड़प देती है ।

'तीन पत्र और आलपिन' कहानी में भारत के एक बेरोजगार युवक का चित्रण किया है । रचनाकार की जीवन दृष्टि नकारात्मक नहीं है, इसलिए उसका विश्वास जीवन से भागने में नहीं, संघर्ष में है । जिसका संकेत मित्र नवीन और पत्नी के माध्यम से दिया है ।

'नए-नए आने वाले' कहानी का जगत बेकार है । पिता के दोस्त के बहुत चाहने के बाद भी अपनी कंपनी में वह जगत को नौकरी नहीं दे पाता क्योंकि वह नौकरी मालिक ने अपने रिश्तेदार के लिए रखी थी । नौकरी सिर्फ रिश्ते नातें में ही दी जाती है भले ही कोई दूसरा उससे योग्य हो ।

'साईकिल' कहानी में अर्थाभाव से रिश्तों के टूटने के दर्द का चित्रण है । अर्थ की महत्ता इतनी अधिक बढ़ गई है कि इसके आगे सारी नैतिकता व्यर्थ सिद्ध होती है ।

राजेन्द्र यादव की 'मेहमान', 'प्रश्नवाचक पेड़', तथा 'सिलसिला' कहानी में अर्थ के अभाव में आए बड़बोलेपन को दर्शाया गया है ।

'शहर के बीच का एक वृक्ष' कहानी में 'अर्थ' को मानवीयता के भक्षक के रूप में दिखाया है । इस कहानी में पीसी माँ को धन लिप्सा की बलिबेदी पर चढ़ा दिया जाता है ।

रामसजीवन कहता है- ''पैसा बहुतो के पास होता है माँ जी, लेकिन खाने-पीने का शौक सबको नहीं होता । पीसी माँ न होती तो हमारी बिटियों की शादी कैसे होती ?''(४) यहाँ इस कहानी में अर्थलिप्सा ने मनुष्य को अन्धा कर दिया है । पैसा प्रधान हो गया और मानवीय मूल्य गौण । अर्थ प्रधान युग में रिश्तों के बिखराव का प्रतिबिम्ब है यह कहानी ।

यथार्थ से जुड़े कहानीकार राजेन्द्र यादव अपनी कहानियों में विस्तार से दिखाते है कि किस तरह मानवता, नैतिकता, संस्कृति और मानव मूल्य जैसे शब्द मनुष्य से अलग होते जा रहे है । यहाँ यादव जी ने 'मानवतावादी' और 'मानववादी' में फर्क किया है । राजेन्द्र जी की कहानियाँ भी उनके मानवतावादी होने का जीता जागता प्रमाण है ।

'लौटते हुए' कहानी में मिसेज सिंघल एक तलाक शुदा औरत है । तलाक एक सच्चाई है । नारी की आत्मनिर्भरता उसके स्वाभिमान को बढ़ा सकती है, उसके 'ईगो' को संतुष्ट कर सकती है, लेकिन पुरुष के अभाव में एक रिक्तता बनी रहती है । इसलिए वह पुरुष की कामना पति, प्रेमी या मित्र के रूप में अनिवार्य रूप से करती है ।

राजेन्द्र यादव की अनेक कहानियों में आधुनिक जीवन को अपनाने वाले पात्रों का चित्रण हुआ है तथा पुरानी परम्पराओं, मूल्यों का स्खलन तथा बदलते मूल्यों का स्वीकार यथार्थ रूप से चित्रित किया है ।

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में पारिवारिक विघटन, संत्रास, अकेलापन, टूटते दाम्पत्य सम्बंध, त्रिकोणीय प्रेम सम्बन्ध, दाम्पत्य संबंधों में किसी तीसरे के प्रवेश से बिखरते सम्बन्ध, आदि विशेषताओं का चित्रण किया गया है । तत्कालीन परिस्थितियों की उपज है राजेन्द्र यादव का कथा साहित्य । आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों ने यादव जी

के साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । राजेन्द्र जी का पहला उपन्यास 'सारा आकाश' है । इस उपन्यास में युवा पीढ़ी की भटकन के साथ-साथ उड़ने के लिये सारा आकाश अपना होने का आभास भी । निराशा को त्याग कर अपने लक्ष्य तक पहुँचने का रास्ता, युवा वर्ग तय करे, परन्तु युवा पीढ़ी के पास सिर्फ सूने आकाश का ही एहसास है । भटकना ही युवा पीढ़ी का स्वभाव बन गया है ।

सारा आकाश का नायक समर अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाना चाहता है किन्तु पुरानी सामाजिक मूल्य-मर्यादाएँ बीच में रूकावट डालती है जिससे नायक के मन में इन मर्यादाओं के प्रति आक्रोश और विद्रोह का भाव उत्पन्न होता है ।

देखा जाए तो राजेन्द्र जी के प्रथम उपन्यास 'सारा आकाश' में संयुक्त परिवार में विघटन, टूटन और कटुता का यथार्थ चित्रण किया गया है । परिवार में विघटन के रूप में, अपने अस्तित्व की पहचान, स्वतन्त्र विकास, महत्वाकांक्षा आदि अनेक कारण सामने आते हैं । स्वातंत्र्य जीवन मूल्यों की वजह से ही संयुक्त परिवार में विघटन होता है ऐसा, यादव जी का मानना है । उनका कहना है- ''समर भाई, सच्चाई यह है कि आपकी पत्नी की सारी आकांक्षाएँ और आपके सारे प्रयत्न इस वातावरण में बिल्कुल विवश होकर घुटघुट कर मर जाएँगे । एक के बाद एक मुसीबतें निकलती आएगी और आप लोग शायद सुख की नींद के सपनों में ही जिंदगी बिता देंगे ।''(५) कथाकार के इन विचारों और मान्यताओं में पारम्परिक मूल्य विरोध तथा व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व की आवाज सुनाई देती है ।

रूढ़िवादिता की जंजीरों में जकड़कर यदि आज का युवा बैठता है तो उसका विकास कैसे होगा । नये-नये विज्ञान के ज्ञान से परिचित होना आज के आधुनिक युवक का धर्म है और रूढ़िवादिता के बंधनों को तोड़ना उसका कर्तव्य है ।

आधुनिक समाज में पति और पत्नी दोनों ही शिक्षित है । स्त्री और पुरुष के मिलने से

वैवाहिक जीवन की शुरुआत होती है । पति-पत्नी का सामंजस्य ही सफल दाम्पत्य जीवन का आधार है, उसे आगे बढ़ाने में सच्चा प्रेम, और एक दूसरे के प्रति समर्पण की भावना, महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । 'सारा आकाश' उपन्यास में नायक समर में समझदारी की कमी है । पढाई की उम्र में ही माता-पिता समर की शादी करा देते हैं, वह पत्नी को अपनी प्रगति में रुकावट समझने लगता है । संयुक्त परिवार का वातावरण और धनाभाव के कारण समर और प्रभा का दाम्पत्य जीवन अशांत और नीरस बना रहता है ।

'सारा आकाश' में दूसरा महत्वपूर्ण पात्र शिरीष है, जिसकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है । वह समर को अपने तर्कशील विचारों के माध्यम से रूढ़ संस्कारों के पारम्परिक मूल्यों को छिन्न-भिन्न कर जागृत करता है । आज का मध्यवर्गीय समाज पुरानी मान्यताओं और रीति-रिवाजों से इतना ग्रसित हो चुका है कि स्थितियाँ अनुकूल हो या प्रतिकूल, वह उन्हें नहीं त्याग सकता । शिरीष को कूपमण्डूकता से नफरत होती है वह समर को अन्धविश्वास, अबुद्धिवाद तथा रूढ़िवादी परम्पराओं से दूर कर जगाने का उपक्रम करता है । देखा जाए तो यादव जी शिरीष के माध्यम से सामन्ती मूल्यों का विरोध करते दिखाई देते हैं ।

आधुनिक मध्यवर्ग धनाभाव एवं आर्थिक विषमताओं से उलझा हुआ असंतोष, अतृप्ति, अवसाद और घुटन के बीच जी रहा है । अर्थ की महत्ता के कारण मानवीय रिश्ते टूट कर बिखरने लगे है । माँ-बाप, पिता-पुत्र एवं अन्य पारिवारिक सम्बन्धों में अर्थ प्रधान हो गया है, इस कारण मध्यवर्गीय परिवारों के आत्मीय रिश्तों में एक टूटन सी दिखाई देती है ।

'शह और मात' उपन्यास में नारी की स्थिति और उससे सम्बन्धित मूल्य-मर्यादाओं का चित्रण बखूबी किया है । इस उपन्यास में यादव जी सदाचार, शील या सच्चरिता चुनौती देते है । उपन्यास में सुजाता, रेखा से तर्क करती है कि संसार के बड़े चिंतक या कलाकार प्रायः अनुकरणीय या आदर्श नहीं कहे जा सकते । लेकिन वे महान है, बावजूद इसके कि उन्होंने

आदर्शो और नैतिक मूल्यों को तोड़ा है । यहाँ मानवीय संवेदना भी मृतप्राय हो जाती है । वर्षो साथ रहकर बस शिष्टाचार का निर्वाह किया जाता है, यह आधुनिक जीवन के मूल्यों का पतन है । यह उपन्यास बम्बई जैसे महानगर की देन है । बम्बई महानगर में आप गिरिए, मरिए यहाँ किसी को आपकी ओर देखने की फुर्सत नहीं है । मनुष्य दिनों-दिन यांत्रिक होता जा रहा है । मानो जीवन एक गाड़ी के पहिए के जैसा घूम रहा है । सुबह से शाम तक यहाँ के बारे में सोचने की फुर्सत भी नहीं है । क्या यही मनुष्य जीवन है ? जो एक मशीनी कल-पुर्जा मात्र बन कर रह गया है । यहाँ मनुष्य की अपनी निजी सत्ता है । यहाँ मनुष्य साथ रह कर भी एक दूसरे को नहीं पहचानता । चारों और आदमियों का समूह नजर आता है, इस समूह में रहकर भी व्यक्ति अकेला है । आधुनिक जीवन की अत्यधिक व्यस्तता, कृत्रिमता और एकरसता ने अनेक विषमताओं को जन्म दिया । इस जीवन में मनुष्य आजीविका और घर के मकड़जाल में ही उलझ कर रह गया है । अर्थ की प्रमुखता और अपने अपने स्वार्थ के अधीन होकर व्यक्ति स्वयं को ही भूल गया है तथा मानवीय सम्बन्धों को मृतप्राय कर दिया है । इस तनाव और संघर्ष ने मनुष्य को मानसिक रूप से बीमार कर दिया ।

इस मशीनी युग में मनुष्य ने एक मशीन का रूप धारण कर लिया है । सहानुभूति, तप, त्याग, सेवा, प्रेम, संवेदनशीलता, दूसरे के प्रति अपनत्व की भावना जैसे मानवीय मूल्य खत्म होते जा रहे है, परिवार, विघटित होते जा रहे है ।

'शह और मात' उपन्यास की नायिका 'सुजाता' में आधुनिकता और प्राचीनता का मिला जुला रूप दिखाई देता है । सुजाता एक लेखिका है, वह तेज से शादी करना चाहती है परन्तु तेज लंदन चला जाता है और वहीं का हो जाता है । उपन्यास में सुजाता के साथ फूल जी का व्यवहार एवं बुआ की टिप्पणी से स्पष्ट पता चलता है कि स्त्री के प्रति पुरानी मान्यताओं में थोड़ा ही परिवर्तन हुआ है । सम्पूर्ण परिवर्तन बहुत दूर की बात है । यादव जी ने इन

विसंगतियों से जूझती एक आधुनिक स्त्री का प्रामाणिक चित्र सुजाता के रूप में दर्शाया है, जिसमें रूढ़ियों से लड़ने की तड़प स्पष्ट दिखाई देती है । सुजाता के अवलोकन बिन्दु से यादव जी इसी नतीजे पर पहुँचते है कि चरित्र, आदर्श, शील आदि एक किस्म की रूढ़ियाँ है । नारी की हैसियत दिखाने के लिए अपर्णा के साथ उसके पति का व्यवहार दिखाया गया है । आधुनिक परिवेश इतना खुरदरा और कठोर होता है कि सम्बन्धों की कोमलता वहाँ बुरी तरह चोटिल हो जाती है ।

'उखड़े हुए लोग' का सूरज आशा करता है कि 'कल' हमारा ही होगा भले ही आज हमारा हो या न हो । आज पर अधिकार यदि देशबन्धु जैसे बहुरूपियों का है तो कल शरद, सूरज और जया जैसे उखड़े हुए लोगों का भी हो सकता है । विषम परिस्थितियाँ उन्हें बिखराव के मुहाने पर खड़ा कर देती है फिर भी बदलते जीवन-मूल्यों के अनुरूप नए-पुराने के बीच टूटते-बिखरते, मुक्त होने के लिए कसमसाते है । इस उपन्यास में मनुष्य ने अपने स्वार्थ के अनुरुप मूल्य और सिद्धान्त बना लिए है । मानवीय संस्कारों की बराबर अनदेखी की जा रही है । दिखावा और बनावटीपन मनुष्य की कोमल भावनाओं पर भारी पड़ रहे है । किसी की मौत होती है और देशबन्धु जैसों की शैतानियत को आदमी के मुखौटे के पीछे पाप का घिनौना रूप चित्रित करती है । इस उपन्यास में शरद और जया का दाम्पत्य जीवन केवल सात दिन के भीतर ही अशांत हो जाता है । जया और शरद समाज में स्थापित परम्पराओं एवं रूढ़ियों को सशक्त रूप से तोड़ देते है और अविवाहित रहकर देशबन्धु के 'स्वदेश महल' में सुखी दाम्पत्य जीवन की शुरुआत करते है । यहाँ राजेन्द्र यादव ने स्त्री-पुरुष के बनते-बिगड़ते सम्बन्धों को नई दिशा देते हुए विवाह का अस्वीकार कर खुले रिश्ते को कायम रखने का प्रयोग भी किया है ।

विज्ञान और शिक्षा की वजह से पुरुषों ने ही नहीं बल्कि नारियों ने भी थोथे आड़म्बर, रूढ़ियों और मान्यताओं को झटकने का साहस किया । जया माता-पिता द्वारा तय किए गये सम्बन्धों को नहीं मानती, वह बुद्धि से युक्त तार्किकता को प्रधानता देती है तथा नारी स्वातंत्र्य

के मार्ग पर चलना चाहती है । उसका मित्र शरद उसकी सोच का सम्मान करता है । वे लोग जातीयता के बन्धन को तोड़, विवाह की प्रथा को भी बेकार और त्याज्य समझ छोड़ देते है । जया की भाँति शरद भी नारी को सहअस्तित्व का महत्व देता है ।

''जब तक मौजूदा व्यवस्था नहीं बदलती तब तक वह नर-नारी के दाम्पत्य जीवन के सन्दर्भ में इस मुक्तता की हामी है कि दोनों के व्यक्तित्व एक-दूसरे पर लदे नहीं, एक दूसरे से दबे नहीं, एक दूसरे की सीमा न बनकर शक्ति बने ।''(६)

सामाजिक आर्थिक संदर्भो के कटु अनुभवों से शरद दुखी हो गया । सिद्धान्त और व्यवहार की पारस्परिकता में लम्बी दूरी दिखने लगती है । शरद की चिन्ता युवा पीढ़ी की चिंता है जो उस दौर से गुजर रही है जिसमें नए मूल्यों के प्रति आकर्षण है । वह सामाजिक रूढ़ियों और बुराइयों को छोड़ना तो चाहती है किन्तु उसमें इतना सामर्थ्य नहीं है कि उनसे जूझ सके ।

देशबन्धु, गुनाह, बेईमानी और पापी होने के साथ-साथ व्यभिचारी भी है । 'औरत' और 'व्यापार' उसके सबसे बड़े दुर्गुण है । इस उपन्यास की पदमा अपने पति के रवैये से त्रस्त रहती है । दूर रिश्ते के एक लड़के को प्यार करती है । उसका प्रेम अनोखा है ।

पूँजीपति देशबंधु मायादेवी को बहला कर उसके पति को मरवा देते है और उसकी सम्पत्ति हड़प कर उसका शारीरिक शोषण भी करता है इतना ही नहीं अपनी ही बेटी पदमा पर बलात्कार करने की सीमा तक उसको आगे बढ़ा दिया है ।

इस उपन्यास में शरद और जया बिना शादी किए पति-पत्नी की तरह रहते है यहाँ पर पारस्परिक सम्बन्ध तथा परम्परागत जीवन मूल्यों का बदलता स्वरूप चित्रण किया गया है । शरद ब्राह्मण है जया कायस्थ । दोनों प्रेम करते है तथा सफल वैवाहिक जीवन बिताते हैं । शिक्षित समाज में अन्तर्जातीय विवाह प्रचलित प्रथा के रूप में मान्यता प्राप्त करता है ।

इसी उपन्यास में केशव पत्नी की मृत्यु के बाद अपनी पुत्री का पालन-पोषण करता है, जब बेटी जवान हो जाती है तो काम तृप्ति के लिए अपनी बेटी से ही सम्बन्ध बना लेता है । उसने सूरज से कहा भी था- ''बाबूजी आम लगाया है, मेहनत की है, लू-धूप में रखवाली की है तो फल खाने का हक भी मेरा है ।''(७) यहाँ काम सम्बन्धों में धुत्त पिता जानवरों की तरह हरकत करता है जिन्हें पता ही नहीं कि रिश्ते-नाते क्या होते है ? मानव-मूल्यों का बदलाव इस उपन्यास में दिखाया गया है ।

'कुलटा' उपन्यास में मेजर तेजपाल और मिसेज तेजपाल के वैवाहिक जीवन की समस्या का प्रमुखतः से चित्रण किया है । मिसेज तेजपाल शादी के आठ साल बाद भी मातृ-सुख से वंचित रहती है । अकेलापन चरम सीमा तक बढ़ने के कारण वह पुराने परिचित वायलिन वादक के पास चली जाती है, मेजर तेजपाल पर नपुंसक होने का आरोप लगाकर । इस उपन्यास में मिसेज तेजपाल पुरानी रूढ़ियों और मान्यताओं को छोड़कर स्थापित नैतिक मूल्यों को चुनौती देती हुई दिखाई देती है तथा अतृप्त काम को तृप्त करने तथा मातृत्व पाने की अदम्य आकांक्षा दृष्टिगोचर होती है । आज प्राचीन परम्पराओं तथा संस्कारों को जीवन जीने की अदम्य शक्ति, आकांक्षा और अस्तित्वबोध ने तोड़ा ही नहीं बल्कि नपुंसक प्रमाणित कर दिया है । यादव जी का कथन है- ''हमारी नैतिक सामाजिक जड़ परम्पराओं, रूढ़ियों तथा जीवन की अप्रतिरोध्य उद्दाम शक्ति के संघर्ष और द्वन्द्व की कहानी अपनी समझ में मैंने 'कुलटा' में कही है । ये सामाजिक रूढ़ियाँ और जड़ परम्पराएँ जिनकी अपनी जीवन-शक्ति विघटित और समाप्त हो चुकी है- आज नपुंसक हो गई है ।''(८) वैवाहिक जीवन में प्रेमाभाव के कारण जो असामंजस्य, वैषम्यता और विक्षोभ पैदा हो जाता है, उसकी कहानी बड़े ही खूबसूरत तरीके से राजेन्द्र यादव ने इस उपन्यास में चित्रित की है ।

मेजर तेजपाल का स्वभाव मिसिज तेजपाल के स्वभाव के एकदम विपरीत है, वे परम्पराओं तथा प्राचीन संस्कारों से बुरी तरह जकड़े हुए है । पति-पत्नी में तनाव बढ़ जाता

है । सहानुभूति और संवेदनशीलता के बावजूद सुलगती यौन समस्या के परिप्रेक्ष्य में यह सवाल भी उठाया जाता है कि नारी के नारीत्व में यदि किसी प्रकार की कमी है तो उसे बेसहारा छोड़ दिया जाता है ।

कहानी का शीर्षक 'कुलटा' अपने आप में ही मूल संवेदना को चित्रित करता है । यदि नारी देवी या दासी की तरह जीवन जीती है तो उसे सही समझा जाता है । इसके विपरीत जीवन जीने की लालसा यदि वह करती है तो उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता है । मिसेज तेजपाल पारम्परिक रूढ़ियों और परम्पराओं को दूर किनार कर घर छोड़ देती है तो बीनू जैसी महिला उसे 'कुलटा' कहती है ।

पति-पत्नी में सच्चा प्रेम, मेल, संतुलन सामंजस्य और एक दूसरे के प्रति समर्पण की भावना जैसे मानवीय मूल्य ही सुखी दाम्पत्य जीवन की कुंजी है । उपन्यास में कोमलता एवं मानवीय सम्बन्धों का अभाव दिखाई देता है । आधुनिक जीवन की गति महानगरों में इतनी तीव्र है कि मानवीय संवेदनाएँ कुचल कर रह जाती है आधुनिक और शहरी संस्कृति का दबाव आदमी की आदमियत को खत्म कर देता है इसका जीता-जागता चित्रण राजेन्द्र यादव ने अपने उपन्यास 'मन्त्रबिद्ध' में किया है ।

आज मनुष्य ने स्वार्थ का चश्मा पहन रखा है जिससे उसका हृदय पत्थर का बन चुका है । दूसरों के दुःख-दर्द और भावनाओं का उसके ऊपर कोई असर नहीं होता ।

'मंत्रविद्ध' उपन्यास में जब तारक और सुरजीत घर छोड़कर मोहन और इंदु के घर आते है तब घर की सारी व्यवस्थाएँ बिगड़ जाती है । निकटतम सम्बन्धी भी बोझ लगने लगते है । ऐसे में मित्रों और रिश्तेदारों के लिए कोई स्थान ही नहीं रह जाता ।

कलकत्ता जैसे महानगर में जीवन की कठिनाइयों का चित्रण उपन्यास में हुआ है जहाँ सम्बन्ध सिमटते जा रहे है । आतिथ्य भाव का संस्कार सीमित समय का रह गया है । सामाजिक सम्बन्धों का ग्राफ गिरता ही जा रहा है ।

अविवाहित सुरजीत और विवाहित तारक विवाह जैसे मूल्यों को अस्वीकार कर साथ रह कर रिश्ता कायम करते हैं । यह युगल समाज में कोई आदर्श नहीं रखता । मूल्यों की संक्रामकता के कारण समाज का डर कम हुआ । फलस्वरूप विवाहेत्तर सम्बन्धों का सिलसिला शुरू हुआ । रूढ़िवादी रीतियों की पकड़ ढ़ीली हुई । बदलते मूल्यों के द्वारा जीवन की संघर्ष-शीलता में बढ़ोत्तरी हुई है । नयी समस्याएँ व्यक्ति को उलझाती है । जहाँ मनुष्य जीवन को लक्ष्यविहीन, गतिहीन होकर जीने के लिए बाध्य है, उन विसंगतियों और विषमताओं को 'मंत्रबिद्ध' उपन्यास में चित्रित किया है । इसमें व्यक्ति सामाजिक मान्यताओं और रूढ़ियों से बोझिल होकर संज्ञाशून्य हो गया है । आधुनिकता और शहरीकरण के दौर में भारतीय समाज का स्वरूप काफी जटिल हो गया है तथा उसकी समस्याएँ और उलझती जा रही है । मूल्यों और परम्पराओं का कोई स्थान नहीं । अनेक कारणों से आज का व्यक्ति विभाजित हो गया है ।

मध्यमवर्गीय समाज की असंख्य आकांक्षाएँ और दिखावे की आदत, जो उसकी आर्थिक स्थिति से जरा भी मेल नहीं खाती, तनाव और मानसिक संघर्ष का कारण बन जाती है । मध्यवर्ग, धनाभाव, एवं आर्थिक विभीषकाओं से उलझा हुआ असंतोष अतृप्ति, घुटन और अवसाद के मध्य जी रहा है । समय के परिवर्तन के साथ मानव मूल्यों में परिवर्तन आना स्वाभाविक है । फलस्वरूप महानगरीय सभ्यता में विषमता, जटिलता कृत्रिमता तथा भौतिकता दिखाई देती है । भारतीय संस्कृति का मूल रूप कुछ हद तक गाँवों में सुरक्षित देखा जा सकता है ।

आधुनिकता हमें मूल्यों के प्रति सचेत करती है । आधुनिकता में ठहराव एवं स्थिरता की जगह निरंतर बदलाव ही अभिप्रेत है । महानगरीय युग में सर्वत्र परिवर्तनाकांक्षी प्रवृत्तियों का उद्‌भव और विकास हुआ । आधुनिक स्त्री-पुरुष परम्परागत वर्जनाओं एवं बन्धनों को स्वीकार नहीं करते । आज नैतिक-अनैतिक, पाप-पुण्य, अच्छाई-बुराई की परिभाषाएँ बदल गई है ।

यौनमुक्ति एक आवश्यकता मान ली गई है । इस उपन्यास में तारकदत्त दिल्ली में कालेज में नौकरी करता है, उसकी पत्नी उसके परिवार वालों के साथ बनारस में रहती है । किन्तु वह पर पुरुष से अवैध सम्बन्ध भी रखती है । नारी-पुरुष दोनों को स्वच्छंदता, मुक्तता चाहिए जो कि किसी नैतिकता तथा मूल्य, संस्कारों के अधीन नहीं रहना चाहते है । 'अनदेखे अनजान पुल' उपन्यास की निन्नी एक मध्यमवर्गीय परिवार की युवती है । काली कुरूप होने के कारण उसके घरवाले चिन्तित रहते है कि उसका विवाह कैसे होगा ? इसी उपन्यास का नायक दर्शन एक लड़की से प्रेम करता है, उसे चाहते हुए भी उसके साथ विवाह नहीं कर सकता क्योंकि उसके पास आय का कोई निश्चित जरिया नहीं है । एक बार दर्शन ने निन्नी के होठों को चूम लिया, इस चुम्बन के लिए निन्नी कृतज्ञता का अनुभव नहीं करती दर्शन के लिए । दर्शन उसके लिए एक आत्मीयता का रूप है । दर्शन की शादी के बाद निन्नी टूट कर ईश्वर की साधना में लीन होना चाहती है । हीनता ग्रंथि से त्रस्त होकर मरना चाहती है । सौन्दर्य विहीन नारी जिस हीनताग्रंथी से पीड़ित होकर कुँठित हो जाती है उसका बड़ा ही हृदयस्पर्शी चित्रण यादव जी ने इस उपन्यास में किया है ।

'एक इंच मुस्कान' उपन्यास में अमर और रंजना के सुखी दाम्पत्य जीवन में तीसरे व्यक्ति के आने से दुखों का पहाड़ टूट जाता है । दोनों का दाम्पत्य जीवन विषाक्त हो जाता है । आधुनिक जीवन में बदलते मानवमूल्यों के फलस्वरूप जीवन की संघर्षशीलता, विषमताएँ और विषंगतियों के जाल में व्यक्ति उलझता जा रहा है । उपन्यास में कई एकल परिवारों का चित्रण किया है । टण्डन और मन्दा का सुखी परिवार है, पर रंजना और अमर का परिवार विघटित है । तमाम कारणों से आज का व्यक्ति विभाजित व्यक्तित्व वाला हो गया है । आधुनिक सभ्यता, मूल्य और आत्मनिर्भरता ने नारी को 'पतिव्रता' बनने के ठप्पे से मुक्ति दिलाई । अमर एक सिद्धान्त प्रिय लेखक है, उसकी तरह आज भी ऐसे लेखक देखे जा सकते हैं जो अभाव के बावजूद भी अपने आदर्शो पर ही स्थिर रहते है ।

'एक इंच मुस्कान' की अमला नारी जन्य संस्कारों को तहस नहस कर अपने जीवन को एक नया मोड़ देती है । उसे अपने पति का ये रूप और व्यवहार असहनीय हो गया था । उसमें विद्रोहिणी का स्वरूप दिखाई देता है । वह भी अन्य पुरुषों से मित्रवत व्यवहार कर उनके साथ स्वछन्द रूप से घूमती है परन्तु अपने अहं पर कोई आँच नहीं आने देती । द्वन्द्वात्मक जटिलता ने उसे दुहरे धरातल पर जीने के लिए मजबूर किया है ।

संदर्भः

१. एक दुनिया समानांतर- राजेन्द्र यादव, पृ. ७२

२. पास-फेल- छोटे छोटे ताजमहल (संग्रह)- राजेन्द्र यादव, पृ. ८८

३. कटी हुई कहानी, टूटना और अन्य कहानियाँ- राजेन्द्र यादव, पृ. ४३

४. शहर के बीच का एक वृक्ष-राजेन्द्र यादव, पृ. ११४

५. सारा आकाश-राजेन्द्र यादव, पृ. ७३

६. उखड़े हुए लोग-राजेन्द्र यादव, पृ. ३८

७. अठारह उपन्यास-राजेन्द्र यादव, पृ. १८७

८. सारा आकाश-राजेन्द्र यादव, पृ. ३८

उपसंहारः

राजेन्द्र यादव जी कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार होने के साथ ही एक महान चिंतक भी है । समाज का संवेदनशील अंग होता है साहित्यकार । इस नाते यादव जी ने युग और समाज के प्रति अपनी तीखी प्रतिक्रियाएँ दी है । साहित्य-सृजन केवल 'स्वांतः सुखाय' न होकर समाज के प्रति एक सामाजिक जिम्मेदारी भी है । जिसका निर्वाह साहित्यकार को करना पड़ता है । प्रत्येक जागरूक रचनाकार की प्रथम जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता उस समय और समाज के प्रति होती है जिससे वह सीधा जुड़ा होता है । महानगरीय पूँजीवादी सभ्यता और संस्कृति में जीवन मूल्यों का संक्रमण, समाज के नए सम्बन्धों की उत्पत्ति, नवीन भौतिक सत्यों के बीच बनती हुई मानव चरित्र की नयी दिशाएँ आदि यथार्थ के जो नए स्तर, नए आयाम और सवालों को चित्रित किया है ।

साहित्य मानव चेतना को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है । समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण करना इसका कर्म है । आज का आधुनिक जीवन परिवर्तन के तीव्र दौर से गुर्जर रहा है । इस परिवर्तन के सार्थक परिणाम के साथ-साथ इसके जहरीले रूप को भी सहना पड़ा ।

राजेन्द्र यादव जी के कथा-साहित्य में पात्रों में द्वन्द्वात्मकता प्रचुरता से दिखाई देती है क्योंकि उनमें जड़ता के प्रति विरोध तथा परिवर्तन की चाह है । वे उस सजगता और चेतनता को जीते है जहाँ मृत हो चुकी रूढ़ियों और मान्यताओं से टकराव है, और उन्हें चुनौती देने का दृढ़ संकल्प भी ।

यादव जी के कथा-साहित्य में आधुनिकता और आधुनिक भावबोध दोनों स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं । उन्होंने मार्क्सवादी विचारों को कम लिया है वे स्वस्थ सामाजिक गतिशीलता के समर्थक है । वे सामाजिक संचेतना के कहानीकार है यद्यपि शिल्प के आधुनिक

प्रयोगों के प्रति उनका लगाव रहा है पर उसके साथ ही यथार्थ-अन्वेषण एवं मानव-मूल्यों की खोज के प्रति भी उनका आकर्षण रहा है । नई कहानी आग्रहों की कहानी नहीं है, प्रवृत्तियों की हो सकती है और उसका मूल स्त्रोत है- जीवन का यथार्थ- बोध और इस यथार्थ को लेकर चलने वाला वह विराट मध्य और निम्न-मध्यवर्ग है, जो अपनी जीवन-शक्ति से आज के विकट संकट को बर्दाश्त कर रहा है । उसका केन्द्रीय पात्र है जीवन को वहन करने वाला व्यक्ति । उनकी स्वयं की कहानियों में कोई निश्चित समाधान या कोई सम्पूर्ण सिद्धान्त नहीं उभरता । 'अपने पार' कहानी संग्रह में कहानियाँ, जो शायद मैं न लिखूँ के अन्तर्गत यादव जी ने अपने कथा लेखन के पीछे निहित प्रेरणाओं और इरादों का उल्लेख किया है ।

यादव जी की पहली प्रकाशित कहानी संभवतः 'प्रतिहिंसा' है जो १९४७ में मई माह में 'कर्मयोगी' में छपी । फिर 'हंस', 'अप्सरा' आदि पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ छपने का क्रम शुरु हुआ । यादव जी के अनुसार सन् १९५० से पहले एक कहानी संग्रह 'रेखाएँ, लहरें और परछाईयाँ' छप गया, जो अब उपलब्ध नहीं है ।

जिस कहानी से यादव जी की पहचान बनी वह 'खेल खिलौने' है । इसमें मध्यमवर्गीय नारी की विवशता और अस्मिता की पहचान के साथ-साथ उसकी तड़प प्रखरता के साथ चित्रित हुई है । नीरजा और नलिनी जैसी पढी, लिखी युवतियाँ अपनी एक अलग पहचान बनाना चाहती है लेकिन समाज उनकी यह इच्छा पूरी नहीं करने देता ।

प्रतीक्षा कहानी में अकेलेपन से ग्रसित गीता की मार्मिक स्थिति को चित्रित किया गया है । 'शहर की यह रात और....' कहानी में कलकत्ते में चल रहे वेश्याजीवन का हृदयस्पर्शी ढंग से चित्रण किया है । 'रहस्यमयी' कहानी में बाल विधवा लीला का चित्रण किया है जो घरवालों के अत्याचार के कारण वेश्या बनती है । 'तलवार पंचहजारी' में नयी पुरानी पीढ़ी के साथ-

साथ सामंती और आधुनिक मूल्यों का संघर्ष दिखाया है । 'सम्बन्ध' कहानी में पुलिस और डाकुओं का साथ मिल कर जनता का शोषण दिखाया है ।

'एक खुली साँझ' में महानगरीय जीवन के खुलेपन का आयाम खुलता है ।

जीवन की विविध समस्याओं का चित्रण यादव जी ने पनी कहानियों के माध्यम से किया है । भावनाओं के आवर्त, संवेदन के सूक्ष्म से सूक्ष्म रेशे और संक्रमण का छोटा से छोटा पल इनमें अनदेखा नहीं रहा । उन्होंने अपनी कहानियों का आधार टूटती हुई परम्पराओं, दाम्पत्य जीवन की समस्याओं, रूढ़ियाँ अंधविश्वास, सम्बन्धों की बदलती स्थिति, घुटन, मानसिक तनाव और नारी पर होने वाले अत्याचारों आदि को बनाया है । 'तीन पत्र और आलवीन' कहानी में दिखाया गया है कि कैसे भ्रष्टाचार के ज्वालामुखी ने युवाओं की शक्ति को खत्म कर दिया है ।

यादव जी ने परम्परागत मूल्यों से लड़ने के लिए प्रगतिवादी विचारधारा का सहारा लिया है । 'लंच टाइम' कहानी का 'देवी सहाय' कम वेतन पर अधिक खर्चा उठाने की वजह से अपने समकालीन तथा उच्चवर्ग द्वारा शोषित होता है । 'आत्मा की आवाज' कहानी के पंडितजी आत्मा की आवाज के अनुसार दूसरों का शोषण करते है । 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' कहानी का 'रूपाराम' अपनी बेटी लक्ष्मी को धन समझ कर तिजोरी में बंधक करके रखता है ।

राजेन्द्र जी ने सामाजिक कैनवास में व्यक्ति के सूक्ष्म से सूक्ष्म व्यवहारों, विचारों और मनःस्थितियों को उकेरने के लिए फंतासी का प्रयोग किया है । 'ढ़ोल', 'परी नहीं मरती' कहानी में फंतासी का प्रयोग हुआ है ।

यादव जी की परिवर्ती कहानियों में सम्बन्धों के बदलने, टूटने और बनाने की प्रक्रिया को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में देखती है । 'पहली कविता', 'पुराने नाले पर नया फ्लैट', 'किनारे से किनारे तक', 'छोटे-छोटे ताजमहल', 'प्रतीक्षा', 'टूटना', 'पेट्रोल पम्प', 'तनाव', 'भविष्य

के आस-पास मँडराता अतीत', 'लौटते हुए', 'एक कटी हुई कहानी' आदि कहानियों में आधुनिक शहरी जीवन में नर-नारी सम्बन्धों की पड़ताल करती है । कभी दाम्पत्य जीवन के परिप्रेक्ष्य में कभी दाम्पत्येत्तर परिधि में अकेलेपन, अजनबीयत से घुटित कुण्ठित व्यक्ति का यथार्थ चित्रण किया है । उनकी कहानियों में संवेदना और समस्या का अजीब सम्मिश्रण पाया जाता है ।

राजेन्द्र यादव जी ने अपने प्रथम उपन्यास 'सारा आकाश' में मध्यवर्गीय जीवन की बैचेनी, छटपटाहट तथा पारिवारिक विघटन की स्थिति का सटीक चित्रण किया है ।

'एक इंच मुस्कान' की अमला पति के दुर्व्यवहार के कारण अपने जीवन को एक नया आयाम देती है । नारी जन्य संस्कारों को छिन्न-भिन्न कर देती है । द्वंन्द्वात्मक जटिलता ने उसे दुहरे-तिहरे धरातल पर जीने के लिए विवश किया है जिससे उसके अभ्यान्तर और बाह्य व्यवहार में शहरी फाँक बन गई है ।

'कुलटा' उपन्यास में दाम्पत्य जीवन वैषम्य, अभाव, असामंजस्य और प्रेमाभाव की स्थिति है । उसे आधुनिक नारी बर्दाश्त नहीं कर पाती । यह उपन्यास उस उच्चवर्गीय जीवन का खुलासा करता है जो भौतिक दृष्टि से सम्पन्न होते हुए भी भीतर से अभावग्रस्त और खोखला है । जहाँ नारी त्रासदी को भुगतती है और मुक्ति के लिए छटपटाती है । अपनी जीवन्तता को कायम रखते हुए आडम्बरपूर्ण परिपाटी का त्याग करती है ।

'शह और मात' उपन्यास का पात्र बदलते जीवन-मूल्यों के अनुरूप ही प्रेम को व्याख्यायित करता है । इस उपन्यास में ठोस धरातल तलाशता 'प्रेम' अभिव्यंजित हुआ है, जिसमें सढ़ी-गली भावुकता का कोई स्थान नहीं । प्रेम का ओछापन नहीं । यहाँ दोनों ही बौद्धिक स्तर पर मित्रता करते है और उनका प्रेम, सान्निध्य, मित्रता की परिणती में होता है । प्रेम में चोट खाई सुजाता अपना हर कदम फूँक-फूँक कर रखती है । यहाँ महानगरीय जीवन में

स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में आ रही स्वतन्त्रता का चित्रण किया है । आधुनिक जीवन में बदलते हुए मानव मूल्यों को दर्शाया गया है ।

'मंत्रबिद्ध' की सुरजीत और तारक भी विवाह को अस्वीकार कर एक दूसरें से रिश्ते कायम करते हैं । देखा जाए तो मूल्यों की संक्रामकता के कारण लोगों की मनःस्थिति और मानसिकता में अत्यन्त बदलाव आया है ।

'उखड़े हुए लोग' उपन्यास में शरद और जया बिना विवाह किए साथ रह कर जीवन व्यतीत करने का निर्णय लेते हैं । वे लोग जातीयता के बन्धन को तोड़ने के साथ ही, विवाह प्रथा को भी निरर्थक और त्याज्य समझकर छोड़ देते हैं ।

राजेन्द्र यादव का कथा-साहित्य, महानगरीय जीवन का चित्रण, अनुभूति की प्रामाणिकता, नवीनता की अभिव्यक्ति, परिवेश की विविधता, परम्परा के प्रति विद्रोह, आधुनिकता आदि विशेषताओं से परिपूर्ण है । उन्होंने महानगरीय जीवन और उसमें बदलते-मानव मूल्यों का यथार्थवादी चित्रण अपने कथा-साहित्य में किया है । इसके साथ ही जो समस्याएँ उन्होंने उद्‌घाटित की है वे सभी की सभी हमारे जीवन के साथ कहीं न कहीं जुड़ी है ।

यादव जी के कथा साहित्य में परम्पारिक मूल्यों का क्षरण, संवेदनशून्य व्यक्तित्व, स्वार्थवश आई क्रूरता, महानगरीय जीवन में जुड़ते-बिखरते परिवारों का चित्रण किया है । दाम्पत्य जीवन के बदलते रंग, अर्थ के अभाव से ग्रसित मनुष्य का जीवन, पति-पत्नी सम्बन्धों में बिखराव, दहेज प्रथा का विकराल रूप, पाप, बेईमानी में लिप्त मनुष्य दिखावे की जिंदगी जीता मनुष्य । आदि पारम्परिक मूल्यों को तथा आर्थिकता को विश्लेषित और विवेचित किया है । इनके कथा साहित्य में आदर्शो ओर विघटित मूल्यों की दुर्गन्ध से भागने की छटपटाहट, पुराने का अस्वीकार तथा नए मूल्यों का स्वीकार, नए निर्माण की कशिश आदि का चित्रण किया है तथा सामाजिकता के विशिष्ट तथा सामान्य आयाम में शोषित समाज की पीड़ा का वर्णन किया है । यौन सम्बन्धों में बदलती मानसिकता, अंधविश्वास की सूक्ष्म झलक, बेकारी

से उत्पन्न गुनहगारी, बेईमानी और पाप से ग्रसित युवा वर्ग । वेश्या जीवन को सहज स्वीकारती हुई युवतियाँ, जाति भेद का नकारना, विधवा विवाह की मान्यता आदि विशेषताओं से परिपूर्ण कथा साहित्य यादव जी की अमूल्य संपदा है । इन्होंने नारी के अन्तर्मन की आवाज तथा मनोग्रंथियों को सूक्ष्मातिसूक्ष्म रेशे-रेशे की वास्तविक धरातल पर उजागर किया है । इनके कथा साहित्य में स्वछंद नारी, विवाह पूर्व प्रेम सम्बन्धों की पीड़ा सहती नारी, परित्यक्ता नारी, वेश्यावृत्ति की नारी, विवाहोत्तर काम सम्बन्धों की पीड़ा को सहती हुई नारी तथा पति से शोषित नारी का बड़ा हृदयद्रावक चित्रण यादव जी ने किया है ।

यादव जी ने मध्यवर्गीय समाज के स्त्री और पुरुषों की विविध समस्याओं, संकीर्णताओं और प्रेम समस्याओं को लिया है । हमारी नई पूँजीवादी अर्थव्यवस्था ने हमारे सामाजिक और पारिवारिक जीवन-मूल्यों को तहस-नहस कर डाला । पुरानी मान्यताएँ और जीवनमूल्य पूरी तरह निरर्थक हो गए है । आर्थिक भ्रष्टाचार, नारी पर अत्याचार तथा राजनीतिक भ्रष्टाचार आदि आज के सामाजिक जीवन के सबसे बड़े अभिशाप है ।

आधुनिक संस्कृति भौतिकवादी संस्कृति है जो मूल्य संकट के गम्भीर काल से गुजर रही है । तेजी से दौड़ता हुआ आर्थिक विकास, दिखावा और स्वार्थ के कारण मानवीय मूल्यों के मायने किस प्रकार बदल रहे है तथा किस प्रकार उन्हें नष्ट किया जा रहा है, इसका स्पष्ट चित्रण यादव जी के कथा साहित्य में दिखाई देता है । इन नष्ट होते मानव-मूल्यों के स्थान पर देने के लिए हमारे पास स्वस्थ एवं नवीन मूल्यों का नितांत अभाव है ।

जब हम राजेन्द्र जी के कथा-साहित्य का अध्ययन और मनन करते हैं तब स्पष्ट होता है कि मूलतः वे प्रगतिवादी कथाकार है । उनके सम्पूर्ण कथा साहित्य में विश्वजनीय करूणा, ममता, दया, क्षमा, प्रेम, दीन दुखियों के प्रति प्रेम, विश्वास, आस्था, संस्कार, कर्तव्यनिष्ठा, अहिंसा, सत्य एवं सदाचार जैसे मानवीय मूल्यों के बदलते रूप की झाँकी कहीं न कहीं अवश्य ही दिख जाती है ।